सूफ़ी संतों का इतिहास मर्म, मर्यादा, मानवता और सकारात्मक मानसिकता का रहा है। सूफ़ी संसार की हर छोटी और बड़ी चीज़ के मर्म को जानने के लिए तत्पर रहते हैं। उनका व्यवहार हर एक के लिए उचित मर्यादा का अभिलाषी होता है। मानवता उनका धर्म और सकारात्मक मानसिकता उनका कर्मकाण्ड होता है। बिहार सनातन काल से ही ज्ञान और तप की भूमि रहा है उसे सूफ़ी संतों की धरती होने का भी सौभाग्य प्राप्त है। 19वीं शताब्दी में सीवान की धरती पर चिश्ती साबरी सिलसिले के जिस केन्द्र ने सूफ़ी मर्यादा को जीवंत कर दिखाया, वह ख़ानक़ाह अमजदिया है। दाग़–धब्बे ढूँढ–ढूँढ कर तोड़ने वाले समाज में स्वयं अपने रंग में रंग कर एक बनाने वाले रंगीले और दूसरों के पाप को अपने परे परवाज़ से ढकने वाले पर वाले शाह साहब दोनों इसी ख़ानक़ाह में कार्यरत रहे हैं। ख़ानक़ाह अमजदिया, सीवान की आध्यात्मिक और साहित्यक दोनों उपलब्धियाँ रही हैं। इसके स्वर्णिम इतिहास का चित्रण सैयद तनवीर अहमद अमजदी ने भली भाँति किया है। आशा है इस संक्षिप्त विवरण से पाठकों को मर्यादा और सकारात्मकता दोनों की लालसा बढ़ेगी।

डॉ० सैयद शाह शमीमुद्दीन मुनअमी
सज्जादा नशीं, ख़ानक़ाह मुनअमिया, मीतन घाट, पटना सिटी

Satya-Darshan
by Syed Tanweer Ahmad Amjadi

आखर प्रकाशन
उत्कृष्टता का मापदण्ड
aakharprakashan@gmail.com
ISBN 81-922108-0-4
9788192210803

सत्य-दर्शन

सैयद तनवीर अहमद अमजदी

सत्य-दर्शन

सैयद तनवीर अहमद अमजदी

हक़ हक़ हक़

सत्य-दर्शन

चिश्तिया साबरिया सिलसिले के महान सूफी-संत एवं आध्यात्मिक महागुरू हज़रत सैयद शाह अमजद अली सुल्तान रंगीला क़द्दससिर्रहू उर्फ़ रंगीला पीर और हज़रत सैयद शाह तसद्दुक़ अली सुल्तान असद शेरशाह तेज़रफ़्तार क़द्दससिर्रहू उर्फ़ पर वाले शाह साहब की संक्षिप्त जीवनी।

लेखक

सैयद तनवीर अहमद अमजदी (मौजूद चिश्ती)

दारूल-इशाअत, ख़ानक़ाह अमजदिया

स्टेशन रोड, सीवान, बिहार (हिन्दुस्तान), पिन कोड-841226

© सर्वाधिकार लेखक सुरक्षित

Satya-Darshan

By

Syed Tanweer Ahmad Amjadi

First Edition: 2022 , Price: 200/-

ISBN:-

पुस्तक का नाम	:	सत्य-दर्शन
स्वरूप	:	जीवनी
लेखक	:	सैयद तनवीर अहमद अमजदी मो0- 7707039731
लेखन वर्ष	:	2000 ई0 (शाबान 1421 हिजरी)
प्रकाशन वर्ष	:	2022 ई0 (सफर 1444 हिजरी)
कुल पृष्ठ संख्या	:	176
मुद्रित प्रतियाँ	:	500
कम्पोज़िंग	:	रियाज़ अहमद खान, दि प्रिन्ट ज़ोन, क़ादरी कमप्लेक्स, सुल्तानगंज, अशोक राजपथ, पटना-6, मो0-9934610612
मूल्य	:	200/-रूपये
प्रकाशक	:	दारूल-इशाअत, ख़ानक़ाह अमजदिया, स्टेशन रोड, सीवान, बिहार (हिन्दुस्तान) पिन: 841226
प्राप्ति स्थान	:	1. ख़ानक़ाह अमजदिया, सीवान (बिहार) 2. ख़ानक़ाह अमजदिया, बहला पो0-भोगराम, थाना-हेमताबाद (रायगंज) जिला-उत्तर दीनाजपुर (पश्चिम बंगाल) 3. ख़ानक़ाह असदिया मुरादिया मझौली राज, देवरिया (यू0पी0) 4. ख़ानक़ाह मुरादिया, टाटानगर जमशेदपुर सिंहभूम (झारखण्ड)

हक़ हक़ हक

समर्पण

आदरणीय आध्यात्मिक गुरू महाराज
हज़रत सैयद शाह सग़ीर अहमद चिश्ती साबरी
अमजदी मद्दा ज़िल्लुहुल आली
(सज्जादानशीन ख़ानक़ाह अमजदिया, सीवान)

को

सादर समर्पित

सैयद तनवीर अहमद अमजदी

अनुक्रम

1.	प्रस्तावना	7
2.	भूमिका	9

रंग हरा

(हज़रत सैयद शाह अमजद अली उर्फ़ रंगीला पीर का जीवन दर्पण)

क्र0 सं0		पृष्ठांक
1.	नूर	15
2.	बहला	21
3.	हिफ़ाज़त	33
4.	कमसिनी	35
5.	शाफ़ी	39
6.	करीमी	41
7.	सनम	47
8.	फ़रमान	51
9.	इनायत	57
10.	जवाब	59
11.	कुतबुद्दीन	71
12.	असर	73

रंग श्याम

सैयद शाह तसद्दुक़ अली (सुल्तान असद/ शेर शाह/तेज़रफ़्तार/ पर वाले शाह साहब) का जीवन दर्पण

1.	मेरठ से सीवान तक	79
2.	इरशाद	105
3.	तजल्ली	115
4.	करामात	117

अतिरिक्त

1.	पावन महोत्सवों का सविस्तार वर्णन	121
2.	नात शरीफ़	144
3.	कलामे अमीर खुसरू रह0 अ0	145
4.	कलामे सैयद मीरान भीक रह0 अ0	146
5.	मनक़बत	147
6.	शजरा शरीफ़ (गद्य रूप में)	160
7.	उर्दू शजरा (पद्य रूप में)	163
8.	फ़ारसी शजरा (विस्तारित पद्य रूप में)	168
9.	फ़ारसी शजरा (संक्षिप्त पद्य रूप में)	175
10.	लेखक की अन्य पुस्तकें	176

———

प्रस्तावना

यह पुस्तक ''सत्य-दर्शन'' हमारे पीर-व-मुर्शिद व पिता हज़रत सैयद शाह सग़ीर अहमद चिश्ती साबरी अमजदी के जिंदगी में लिखी जा चुकी थी, जिसे वे मेरी जुबान से सुन चुके थे। वे इसे प्रकाशित कराने का इरादा रखते थे। किन्तु दुःख की बात है कि इसके पूर्ण होने के डेढ़ साल बाद ही 14 सितम्बर 2002 ई0 को उनका निधन हो गया और यह पुस्तक प्रकाशित न हो सकी। वे इस पुस्तक को यदि अपनी ज़ाहिरी आँखों से प्रकाशित अवस्था में देखते तो मुझे कुछ और ही प्रसन्नता का आभास होता।

यह मेरा सौभाग्य था कि पीर-व-मुर्शिद ने इस नाचीज़ के पुस्तक को प्रकाशन के लिए क़बूल कर लिया था। वरना मैं कहाँ इस योग्य हूँ कि वलीअल्लाह के लिए अपनी कलम उठा सकूँ। अभी इस क्षण ये बातें शामिल करते हुए खुशी हो रही है कि इरशादे आज़म द्वितीय को सन् 2015 ई0 में इल्तेफातुल औलिया सैयद इल्तेफात अहमद अमजदी चिश्ती साबरी उर्फ नौशा मियाँ चिकित्सा पदाधिकारी (बिहार सरकार) ने अपने निजी खर्चों से प्रकाशित करके अपने पिता एवं गुरू हज़रत सैयद शाह सग़ीर अहमद चिश्ती साबरी अमजदी के सपनों को साकार कर दिया है। यह उत्कृष्ट कार्य कर उन्होंने अमजदी गुलामों पर ऐसा उपकार कर दिया है, जिसका जितना भी शुक्रिया अदा करें, बहुत कम है। अल्लाह पाक का शुक्र है कि वो इस योग्य हैं कि अति व्यस्तता के बावजूद गुरू-शिष्य परंपराओं का भलीभाँति निर्वहन कर रहे हैं।

दूसरी बात ये कि सन् 2010 ई0 में मेरे द्वारा रचित ''बहारे अमजदी'' नामक पुस्तक ख़ानक़ाह अमजदिया सीवान द्वारा

प्रकाशित हुई। यह पुस्तक उर्दू भाषा के पद्य रूप में है जो मेरे गुरू महाराज हज़रत सैयद शाह सग़ीर अहमद अमजदी चिश्ती साबरी को समर्पित है। यह पुस्तक हम्द, नात, मनक़बत और दरगाह में उर्स के दौरान होने वाली विभिन्न रस्मों जैसे निशान, गागर, सन्दल, चादर में पढ़ी जाने वाली कव्वालियों का संग्रह है। कुल पृष्ठो की संख्या 208 तथा सात विभिन्न रंगों पर आधारित है। इस पुस्तक में इसके अतिरिक्त खानकाह अमजदिया सीवान में होने वाली उत्सवों (उर्स) का सविस्तार वर्णन है। साथ ही सिलसिला चिश्तिया साबरिया अमजदिया का शजरा शरीफ भी शामिल है।

यह पुस्तक (सत्य-दर्शन) जो आपके हाथों की शोभा बनी है। ये इल्तेफातुल औलिया सैयद शाह इल्तेफ़ात अहमद अमजदी चिश्ती साबरी मद्दा ज़िल्लुहुल आली के प्रयासों का फल है। क्योंकि ये पुस्तक 2000 ई0 में पूर्ण हो चुकी थी। लेकिन अबतक प्रकाशित न हो सकी थी। इस पुस्तक के प्रकाशन की जिम्मेदारी उन्होंने खुद ली। अल्लाह पाक इन औलिया के तुफ़ैल इस कल्याणकारी कार्य का सवाब इन्हें अता करे। मैं इनका तहे दिल से शुक्रगुज़ार हूँ। अब मैं मुबारक अज़ीमाबादी की इस शेर पर अपनी बात खत्म करता हूँ।

मेरी ख़ाक भी उड़ेगी बा अदब तेरी गली में
तेरे आस्ताँ से ऊँचा न मेरा गुबार होगा

सैयद तनवीर अहमद अमजदी
ख़ानक़ाह अमजदिया, स्टेशन रोड,
सिवान (बिहार)

27 जनवरी 2022 ई0

भूमिका

जैसा कि हम सब जानते हैं कि औलिया (सूफी-संत) की ज़िन्दगी सभी के लिए नमूना-ए-अमल हुआ करती है। वे अपने जीवन काल में बिना भेद-भाव किए तमाम इंसानियत की भलाई के लिए हमेशा कोशिशें करते रहते हैं। औलिया(सूफी-संत) से प्रेम और उनके निर्देशों का पालन हमारे निजात (मुक्ति) का माध्यम बनती है। औलिया ऐसे होते हैं, जिनकी शिक्षा को अपने जीवन में उतार लें तो हम अल्लाह के क़रीब हो जाते हैं।

'सत्य-दर्शन' में हम ऐसे ही औलिया की ज़िन्दगी का ज़िक्र करेंगे, जिनके जीवन का क्षण प्रति क्षण करामात से भरी हुई थी। जिनकी ज़िन्दगी का हर पल उपदेशों से परिपूर्ण था। निश्चित ही ऐसे औलिया का दर्शन कर लेने पर दिल में सत्य की शमा रौशन हो जाती है। इस पुस्तक की रचना में मैंने अपने ज्ञान के अतिरिक्त निम्न पुस्तकों से भी कुछ संकलन किया है:

(1) इरशादे आज़म वाहिद- सैयद शाह तसद्दुक अली असद
(2) जलवाए हक़ीक़त- शाह अख़्तर हुसैन गयावी
(3) परे परवाज़े तसव्वुफ़- क़य्यूम खिज़र
(4) पर वाले शाह साहब की डायरी से

उन्नीसवीं शताब्दी के महान् सूफी-संत एवं आध्यात्मिक महागुरू 'रंगीला पीर' का शुभ नाम सैयद अमजद अली है, जिनके नाम से सूबा बिहार के सीवान जिला में सीवान जंकशन से थोड़ी दूर पश्चिम 'रामराज्य मोड़' के पास एक आश्रम

अवस्थित है, जो ''ख़ानक़ाह अमजदिया'' के नाम से जाना जाता है। ये ख़ानक़ाह सूबा बिहार में सिलसिला-ए-चिश्तिया साबरिया में एक ख़ास मक़ाम रखता है, क्योंकि इस ख़ानक़ाह से सिलसिला-ए-चिश्तिया साबरिया को जो उन्नति हासिल हुई, वो साबरी सिलसिले वालों के लिए गर्व की बात है।

इस मौक़े पर मुझे एक बात याद आ रही है कि हज़रत सुल्तान रंगीला पीर की मलफ़ूज़ात (वाणी संग्रह) बनामे ''इरशादे आज़म वाहिद'' जिसे आपके आध्यात्मिक शिष्य और ख़लीफ़ा हज़रत सैयद शाह तसद्दुक अली सुल्तान असद शेरशाह तेज़रफ़तार इमामुल औलिया क़द्दससिर्रहू (पर वाले शाह साहब) ने रचना की है, को देखकर ख्वाजा हसन सानी निज़ामी (सज्जादा नशीन दरगाह निजामुद्दीन औलिया, देहली) ने फरमाया था-

''सिलसिला-ए-साबरिया के किताब का ये तेवर!!!''

इस ख़ानक़ाह से अब तक पूरे भारत में करीब एक दर्जन शाखाऐं प्रस्फुटित हो चुकी हैं। यह ख़ानक़ाह प्रकाशन के क्षेत्र में सिलसिला-ए-साबरिया का अहम केन्द्र-बिन्दु है, जहाँ अध्यात्म सम्बंधी कई पुस्तकों का प्रकाशन होता चला आ रहा है।

ख़ानक़ाह अमजदिया में पहली बार दर्शन हेतु पधारने वाले श्रद्धालुओं के हृदय में पहले ये प्रश्न उठता है कि मैं यहाँ और पहले क्यों नहीं आया? इस प्रश्न का कारण केवल यहाँ पर उन्हें मिलने वाली अपार शांति और सुकून है!

ख़ानक़ाह में आने वाले व्यक्ति से ये नहीं पूछा जाता कि वे कौन जाति और धर्म के हैं, कहाँ से आए हैं, क्यों आए हैं, कौन सा काम करते हैं, कितना कमाते हैं, कितना भेंट देना चाहते

हैं? यहाँ चन्दा और दान लेने के लिए कोई काउण्टर नहीं है और न ही कोई रसीद काटा जाता है, न रजिस्टर मेन्टेन करने की प्रथा है। यहाँ आने वाले व्यक्ति को कुछ देने की बाध्यता नहीं है, बल्कि उन्हें तो सिर्फ लेना ही लेना है और चीज भी ऐसी लेनी है, जो बाजारों में नहीं बिकती। यह चीज शांति और सुकून है।

यह ख़ानक़ाह न तो झाड़-फूंक और गण्डे-तावीज़ का अड्डा है और न ही औरतों के खेल-तमाशा करने की जगह है। यहाँ आने वाले परेशान-हाल मज़ार पर शांतिपूर्ण ढंग से अपनी परेशानी बयान करते हैं और उन्हें मज़ार की ख़ाक (भभूत) दे दी जाती है, जो उनके अक़ीदत के मुताबिक उन्हें शिफ़ा देती है।

इस ख़ानक़ाह के सज्जादानशीनों का कभी ये तरीका नहीं रहा है कि वे ख़ानक़ाह में बैठकर मुरीद बनने की चाह रखने वाले जोक़-दर-ज़ोक आदमियों को एक बारगी मुरीद बना लिया हो या वे ख़ानक़ाह से बाहर जगह-जगह का दौरा कर मुरीद बनाते हों। यहाँ के सज्जादानशीनों का क़दम कभी बे-वजह ख़ानक़ाह के अहाता से बाहर भी नहीं निकलता है।

मेरे कहने का तात्पर्य ये है कि आप ख़ानक़ाह के सही रंग-ढंग से अवगत हो जाएँ और अपनी देखने वाली आँखों पर विश्वास करें। किसी के सुनने पर न जाएँ। वास्तव में ये ख़ानक़ाह आशाओं का केन्द्र-बिन्दु है। यहाँ आशाओं की कलियाँ खिलती हैं और निराशा के बादल छँट जाते हैं। यहाँ बग़ैर किसी धार्मिक भेदभाव के सभी को आने की अनुमति है। हर मज़हब का इंसान ईश्वर की आराधना में लीन हो सकता है और हर किसी के साथ बराबरी का रिश्ता रखा जाता है।

'सत्य-दर्शन' को चार विभिन्न रंगों में इस प्रकार सुसज्जित किया गया है— पहला रंग 'हरा' जिसमें हज़रत सैयद शाह अमजद अली सुल्तान रंगीला क़द्दससिर्रहू (रंगीला पीर) की ज़िंदगी के हालात को विभिन्न अध्यायों के अन्तर्गत वर्णन किया गया है। दूसरा रंग 'श्याम' जिसमें सुल्तान रंगीला के चहेते ख़लीफ़ा हज़रत सैयद शाह तसद्दुक अली सुल्तान असद शेरशाह इमामुल औलिया क़द्दससिर्रहू (पर वाले शाह साहब) के विषय में उल्लेख किया गया है। तीसरा रंग 'लाल' जिसमें हज़रत सुल्तान असद शेरशाह तेज़ रफ़्तार इमामुल औलिया क़द्दससिर्रहू के ख़लीफ़ा हज़रत सैयद शाह हकीम खुर्शीद अली सुल्तान रशीद क़द्दससिर्रहू के हालात को लिखा गया है और चौथा रंग 'ज़र्द' है जिसमें मेरे गुरू महाराज और हज़रत सुल्तान खुर्शीद अली क़द्दससिर्रहू के ख़लीफ़ा हज़रत सुल्तान सग़ीर अहमद अमजदी मदज़िल्लहू के हालात को लिखा गया है। परन्तु इस पुस्तक में सिर्फ दो रंग 'हरा' और 'श्याम' को शामिल किया गया है। बाक़ी दो रंग अगले संस्करण में प्रकाशित किए जाएँगे।

सैयद तनवीर अहमद अमजदी
9 नवम्बर 2000 ई0

रंग हरा

(रंगीला पीर के हालात)

हक़ हक़ हक़

नूर

रंगीला पीर का शुभ नाम सैयद अमजद अली है। आपको अपने गुरू महाराज हज़रत हाजी शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी[रह0अ0] के माध्यम से इमामुल अस्फिया, दाएमुर्रबूबीयत सुल्तान रंगीला, आख़ेरूलबक़ा जैसी अपूर्व उपाधियाँ प्राप्त हुई थीं। आप अपने युग के प्रख्यात महापुरूष, अध्यात्म के प्रचण्ड ज्ञाता, ईश्वरदत्त ज्ञान के माहिर और परम ज्ञानी महात्मा गुजरे हैं। हज़रत इमदादुल्लाह मुहाजिर मक्की, वारिस पाक देवा शरीफ़, हज़रत ताजुद्दीन नागोरी, हज़रत ग़ुलाम फ़रीद चाचराशरीफ़, हज़रत अकबर दानापुरी, हज़रत दाता कम्बल शाह मुज़फ़्फ़रपुरी, हज़रत आसी ग़ाज़ीपुरी आदि महात्मा आपके समकालीन हैं। आप छठवें इमाम हज़रत इमाम जाफ़र सादिक़ रज़ी अल्लाहो अन्हो (हज़रत इमाम हुसैन के प्रपौत्र के पौत्र) की वंश से हैं। आपका जन्म-भूमि उत्तर प्रदेश जिला मैनपुरी है। आपके पूर्वज अफ़ग़ानिस्तान के रहने वाले थे और उनका भारत वर्ष में शुभागमन सुप्रसिद्ध शासक हज़रत महमूद शाह ग़जनवी की सेना के साथ ग्यारहवीं शताब्दी में किसी सामयिक आवाहन के क्रम में हुआ था।

आपका जन्म आपके शिष्य और ख़लीफा हज़रत सैयद शाह तसद्दुक अली सुल्तान असद सुप्रसिद्ध पर वाले शाह साहब के अनुसार ग्यारह जमादी-उस-सानी, बुधवार, सन् 1254 हिजरी (1838 ई0) 3 बजे रात्रि मैनपुरी (उ0 प्र0) में हुआ।

आपके पिता का नाम सैयद बहादुर अली, दादा का सैयद हैदर अली और परदादा का सैयद अज़ीम अली था। इन लोगों का पेशा काश्तकारी था। ये लोग इतने उदार थे कि मज़दूरों के रहते हुए भी खुद अपना काम कर लिया करते थे और यदि उनसे कोई काम बिगड़ जाता, तो स्वयं ही संवार लिया करते और उनपर कभी नाखुश नहीं हुआ करते थे। जो खुद खाते, वही उन्हें खिलाते, जो खुद पहनते, वही उन्हें पहनाते यानी स्वामी और दास में कोई भेदभाव न था।

आपके परदादा सैयद अज़ीम अली अरबी और फारसी भाषाओं के प्रकाण्ड विद्वान थे। वे अपना समय सदा ईश्वर की याद में बिताया करते थे। प्रवचन और धर्मोपदेश से कुछ भी सरोकार न रखते थे। केवल ईश-स्मरण से मतलब रहता था। ईश्वर पर भरोसा रखते थे और लोगों से निःस्वार्थ मिला करते थे। उनके निधन के पश्चात् उनके पुत्र हैदर अली भी उन्हीं के पद-चिह्नों पर चले और इन्होंने भी वही काम किया।

आप (रंगीला पीर) बिल्कुल निरक्षर थे। किसी भी शिक्षक से आपने परम्परागत शिक्षा ग्रहण न किया था। यही कारण है कि आपकी उपाधियों में एक उपाधि ''उम्मीवली'' भी है। आपका ज्ञान ईश- प्रदत्त था। अध्यात्म (Mysticism/तसव्वुफ़) की ज्ञान में आपका स्थान अद्वितीय है।

युवावस्था में आप (रंगीला पीर)आगरा के रेल-विभाग में सरकारी नौकरी करते थे। जब ईश-प्रेम ने आपको अपनी ओर आकृष्ट किया, तो शीघ्र ही नौकरी से इस्तीफा दे दिया। मित्र, परिजनों एवं संबंधियों से मिलना-जुलना छोड़कर चार वर्ष तक घर

के एक कोने में रहना प्रारंभ किया यानी गोशानशीनी इख़्तियार की। तदोपरांत आपने हज़रत ख्वाजा हाजी कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी, जो चिश्तिया साबरिया सिलसिला से संबंध रखते थे, से शिष्यता प्राप्त की और बारह वर्ष तक उनकी सेवा में रहे। इसके बाद आप अपने गुरू हज़रत हाजी कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी के आदेशानुसार हर नगर और वन का भ्रमण करते हुए कलकत्ता पहुँचे और वहाँ से बर्दवान, मुर्शिदाबाद, दीनाजपुर, अजीमाबाद, मुजफ़्फ़रपुर, दरभंगा, मिर्जापुर, आजमगढ़, बिहारशरीफ देखते हुए शुक्रवार के दिन जनवरी महीना में 1892 ई0 (1309 हिजरी) को तीन बजे दिन में रेलगाड़ी द्वारा सीवान स्टेशन पर पहुँचे और ट्रेन से उतरकर एक इक्का किराया पर लिया और उसी वक्त उसमें सवार होकर इक्कावान् से फरमाया- ''घोड़े की रास छोड़ दो, वह जहाँ जाकर ठहर जाएगा, वही मेरी मंज़िल होगी।'' वह इक्कावान् आपके आदेशानुसार वैसा ही किया; घोड़ा अपनी इच्छा से चलता हुआ सीवान से तीन की0 मी0 दक्षिण की ओर टेढ़ी घाट नामक स्थान पर जाकर रूक गया। आप ईश्वरीय संकेत को देखते हुए वहीं उतर गए और सड़क के पूर्वी ओर एक बाग में जाकर रहना प्रारंभ किया, जहाँ कुछ दिनों पश्चात् आपके लिए एक आश्रम का निर्माण हुआ और लगभग तीन वर्षों तक आपका वहाँ निवास रहा।

आपका व्यवहार सभी के साथ एक समान था। अर्थात् आपको बुरे और भले दोनों से ही स्नेह था। न किसी के प्रशंसक होते थे और न किसी के निंदक बनते थे। आपका कहनाम था- ''सभी ने अच्छों को अपनाया है, मैंने बुरों को भी अपना लिया है; आख़िर ये कहाँ जाएंगे?' आप हमेशा ईश्वर पर दृढ़ता के

साथ भरोसा एवं विश्वास रखते थे। कभी किसी आदमी से आपने एक पैसे की भी इच्छा ज़ाहिर न की जबकि रसोई-घर का खर्च काफ़ी था।

आप (रंगीला पीर) शरद-ऋतु में पौष्टिक खाद्य पदार्थों का सेवन प्रचूर मात्रा में किया करते थे। बादाम और जाफ़रान (केसर) आपको बहुत प्रिय था। सुबह के जलपान में दो बकरी के सिरे का शोरबा, जिसे एक सेर घी में बघाड़ा जाता था, पिया करते थे। दूध दही से आपको कोई रूचि न थी और मांस में मसाले की जगह प्याज़, अदरख और मिर्च के अलावे कोई अन्य सबज़ी डलवाना पसन्द नहीं करते थे। ग्रीष्म-ऋतु में आँवला और सेब का मुरब्बा, रजत- पत्र में लपेट कर खाया करते थे। आपके खर्च के अलावे मेहमानों का खर्च भी काफी था, क्योंकि दोनों समय हमेशा पाँच-दस आगंतुक निश्चित रूप से आपके साथ सहभोज में शामिल होते। कोई मंगता चाहे हिन्दू हो या मुसलमान कभी आपके दरबार से खाली हाथ न लौटता। इस राजसी व्यय पर रंचप्रिय भी इस कोटि के थे कि महीनों जौ की रोटी बिना नमक खाया करते थे। कभी-कभी वन-उद्भिज घास-पात से भी पेट-पूजा कर लिया करते थे। कभी मक्की के सत्तू पर भी संतुष्ट हो जाते थे। तात्पर्य ये कि वक्त पर जो मिल जाता, उसी पर संतोष कर लेते थे। भूख की शिकायत कभी अपने मुख पर न लाते थे। संतुष्टि का यह आलम था कि पच्चीस-पच्चीस दिन तक निराहार रह जाते, परन्तु अपनी उपवास की भनक तक किसी को न लगने देते। यदि स्वभाव में सुस्ती की शिकायत कोई कर बैठता, तो आप मुस्कुराकर फ़रमाते- ''अभी भोजन किया हूँ,

जिसके कारण मिज़ाज में कसावट और काहिली आ गई है।''

आपकी अपनी कोई विशेष वेश-भूषा न थी। आपको हर रंग और हर तरह के वेश-भूषा धारण करने की अनुमति प्राप्त थी। आपका वेश कभी अमीराना रहता था, तो कभी बिल्कुल ही पुराना-धुराना वस्त्र पहन लेते थे। आप अबा, कबा, अचकन, अंगरखा, कोट, वास्कोट, तहबन्द, पायजामा, बिरजीश सब पहना करते थे। सर पर कभी इमामा, कभी चर्म की टोपी रखते थे। सर्दी में गुलूबन्द बाँधते थे। पैरों में मोजा भी पहना करते थे। हाथों में कभी-कभी दस्ताने भी पहन लिया करते थे। जूता कभी स्वर्णिम तारों से युक्त तो कभी फटा-लतेरा रहा करता था। यात्रा के दौरान अपना पोशाक सिपाहियाना कर लिया करते थे। यानी रंगीले थे, इसलिए आपके वेश का रूप भी सदा रंगीली रहा करती थी।

आप(रंगीला पीर) पट्टा बिनवट और कुश्ती की कलाओं से भली-भाँति परिचित ही नहीं बल्कि इसमें निपुण थे और चाबुक सवारी में बेमिसाल थे। आपने अपना विवाह नहीं किया था। आप आजीवन अविवाहित ही रहे।

आपका निधन बंगाल से सीवान आने की यात्रा के क्रम में दरौंदा रेलवे स्टेशन के निकट ट्रेन में पन्द्रह रबीउस्सानी 1328 हिजरी तदनुसार 25 अप्रैल 1910 ई0 को बुध के दिन दो बजे रात्रि को हुआ और आपके शव को ख़ानक़ाह अमजदिया सीवान (जो रामराज्य मोड़ के समीप स्थित है) के आंगन में पूरब ओर आपके हुजरा के भीतर दफनाया गया, जिसपर पर वाले शाह साहब ने एक शानदार गुम्बद का निर्माण कराया और मज़ार की

ऊँचाई इतनी रखी कि उस पर चढ़ने हेतु नौ सीढ़ियाँ थीं।

रंगीला पीर को अगले अध्याय में ''मोमज्जद'' से संबोधित किया जाएगा; क्योंकि आपकी विशिष्टता इसी शब्द से ज़ाहिर होती है। इसका शाब्दिक अर्थ होता है बुज़ुर्गी दिया गया बड़प्पन प्रदान किया गया। मलफ़ूजात (वाणी संग्रह) में आपको मोमज्जद से ही संबोधित किया गया है। मोमज्जद के बाल्यावस्था से ही बहुत से चमत्कारों का होना प्रारंभ हो गया था, जो इस बात को प्रमाणित करती है कि रंगीला पीर जन्मजात वली थे।

——

हक़ हक़ हक़

बहला

मोमज्जद (रंगीला पीर) ने पटियाला के भ्रमण के उपरांत रूदौली शरीफ में अपने पीरो मुर्शिद कुतबे आलम हज़रत हाजी कुतुब अली शाह नन्दानवी बनारसी रहमतुल्ला अलैह की हुज़ूरी में रहने लगे तो एक दिन हज़रत हाजी कुतुब अली शाह बनारसी[रह०अ०] ने आपको दकन की यात्रा का हुक्म दिया। आप (रंगीला पीर) आदेशानुसार कुछ दिन के सफर के उपरान्त मक़ाम 'बिजगदा' पहुँचे और यहाँ के किला का खूब सैर किया और बहुत सारे लोगों को अपने हाथ पर बैअत (मुरीद) की और उन्हें ईश्वर के जाप की पद्धति बताई। सैर करने के पश्चात् ख़ौफ़नाक वनों का भ्रमण करते हुए मक़ाम 'सिकरौली' पहुँचे। वहाँ का राजा दुआ लेने के लिए आपकी सेवा में उपस्थित हुआ और नज़राना पेश किया। फिर सिकरौली से ग्वालीयर धवलपुर होते हुए आगरा से इटावा पहुँचे। इटावा में शाह हुसैनी नामक एक साहबे कमाल फ़कीर आपसे मोहब्बत से मिले और ख़ूब इज्ज़त दी और चार दिनों तक अपना मेहमान बनाए रखा। यहाँ से विदा होने के पश्चात बनारस आ गए।

मोमज्जद (रंगीला पीर) को अपने पीर-व-मुर्शिद हज़रत हाजी कुतुब अली शाह बनारसी की सेवा में रहते हुए जब बारह साल गुज़र गए तो एक रोज़ पीर-व-मुर्शिद (हज़रत हाजी कुतुब अली शाह बनारसी[रह०अ०]) ने इरशाद फरमाया- ''सैयद अमजद! अब मेरी ख़िदमत से रूखसत हो जाओ और ग़मगीन मत होवो; क्योंकि ये खुदा का हुक्म है। चूँकि तुम अपना लक्ष्य प्राप्त कर चुके हो और तुम्हारी मनोकामना पूरी हो चुकी है।''

मोमज्जद (रंगीला पीर) अपने पीर-व-मुर्शिद की सेवा में बारह वर्षों तक रहे। इस दौरान हज़रत हाजी कुतुब अली शाह नन्दानवी बनारसी आपसे हमेशा बहुत खुश रहे और उनके चहेते बने रहे। अब रंगीला पीर, पीर-व-मुर्शिद के आदेश को ईश्वरीय संकेत मानकर भारी मन से विदा हुए और उनकी जुदाई लेकर मुल्क की सैर के लिए निकल पड़े।

मोमज्जद(रंगीला पीर) ने चकिया के पहाड़ों की सैर की। फिर बनारस होते हुए ट्रेन द्वारा कलकत्ता पहुँचे। स्टेशन से उतरकर मुंशी अब्दुलहई साहब के यहाँ निवास किया। काफी दिनों तक कलकत्ता की सैर की। फिर बर्दवान आए। वहाँ यारदिल नाम के एक आदमी की इच्छानुसार उसे सेवक के रूप में अपने साथ रख लिया। फिर बर्दवान से विजयपुर होते हुए पैदल ही मुर्शिदाबाद पहुँचे। यहाँ यारदिल ने आपकी इच्छा के विरूद्ध कुछ ऐसा काम किया जो आपके मिज़ाज के ख़िलाफ था। वह आपके रोबे जलाल की वजह से रात में बाजार का बहाना बनाकर चंपत हो गया। जब यारदिल सुबह तक नही आया तो आप उसी रोज अकेले मुर्शिदाबाद से निकल पड़े और कश्ती में सवार होकर दरिया लाल हट्टी आए और वहाँ से दीनाजपुर के लिए रेलगाड़ी

में सवार हो गए। यह सन् 1889 ई0/1306 हि0 का ज़माना था।

मोमज्जद (रंगीला पीर) जब दीनाजपुर स्टेशन पहुँचे तो रेलगाड़ी से उतरकर बाहर आए और हलवाई की दुकान पर दो आना की मिठाई और पूरी लेकर शिकम सैर हुए। तत्पश्चात् पैदल पूर्णियाँ की जानिब प्रस्थान किए। दो रोज़ की यात्रा के बाद राह में 'बहला' नामक मौज़ा मिला। चूँकि मस्जिद सड़क किनारे अवस्थित थी और शाम का समय हो चुका था। इसलिए आपने मस्जिद में निवास किया।

मोमज्जद (रंगीला पीर) को अजनबी देखकर नमाज़ियों ने आपसे दरयाफ़्त किया- ''आप कौन हैं? कहाँ से आए हैं? क्या नाम रखते हैं? और किधर जाना है?'' आपने उन नमाज़ियों को जवाब दिया- '' मेरा नाम फानी हेयाती है। अहमद नगर से आता हूँ और रसूलपुर जाऊँगा। यदि आप लोग अनुमति दें तो मैं मस्जिद में निवास करूँ वरना मैं अभी यहाँ से चला जाऊँगा।'' उन लोगों ने कहा- ''आप सहर्ष मस्जिद में निवास करें, हमें कोई आपत्ति नहीं है।''

मस्जिद नमाज़ियों से रिक्त होने के पश्चात मोमज्जद (रंगीला पीर) ने एक तरफ़ अपना बिस्तर लगाया और विश्राम करने लगे। जब सुबह चार बजे जगे तो अपने समीप दो आदमियों को बाअदब दो जानू बैठे हुए देखा। ख़ामोशी से आपने उठकर सर्वप्रथम खुदा की आराधना की और इसके बाद उन लोगों की तरफ़ मुख़ातिब हुए- ''आप लोग किस लिए बैठे हैं और घर क्यों

नहीं गए?'' उन लोगों ने जवाब दिया- ''हम दोनों भाई हैं और हम में एक का नाम महताबुद्दीन है और दूसरे का आफताबुद्दीन है। हम लोग ईशा की नमाज़ अदा करने आए थे लेकिन उस वक़्त आपको नहीं देखा। नमाज़ से निवृत होने के बाद यकायक कानों में अल्लाह अल्लाह की आवाज़ का आभास हुआ। हम लोगों ने खूब नज़र दौड़ाई तो नज़र आप (रंगीला पीर) पर आकर टिक गई। आपको उस वक़्त सोता हुआ देखा किन्तु सीने से लगातार अल्लाह अल्लाह की सदाएँ निकल रही थी। हमें तुरंत ये पुख्ता यक़ीन हो गया कि आप ख़ुदा रसीदा फ़क़ीरे कामिल हैं। ख़ुद को सौदागरी की लिबास में छुपा रखा है। हालते ख्वाब में यादे ख़ुदा करना दर्वेश का ही काम है। हमें इस बात का सबूत मिल गया कि फ़क़ीर का जिस्म सोता है और दिल बेदार रहता है। इसी कारणवश मैं रातभर यहाँ रूका रहा कि ख़ुदा न ख्वास्ता फ़कीर बिना ख़बर किए कहीं दूसरी तरफ़ तशरीफ़ ले जाएँ और हम उनके फ़ैज़ से ता उम्र नामुराद रह जाएँ।''

मोमज्जद (रंगीला पीर) ने खुद को 'पारचा फरोश' यानी कपड़े का व्यापारी बता कर महताबुद्दीन और आफताबुद्दीन से कहा कि मेरे माल के नहीं आने के कारण मैं एक रात गाँव में ठहर गया और आज माल के आते ही यहाँ से चला जाऊँगा और अगर इसी जगह कोई खरीदार मिल गया तो उसे माल बेच दूँगा। इस प्रकार मोमज्जद (रंगीला पीर) ने व्यापारी की वेशभूषा में अपनी पहचान छुपाने हेतु उनसे बहुत सारे बहाने बनाए लेकिन उन

भाईयों पर आपका भेद खुल चुका था। वे किसी भी हालत में आपसे जुदा होने को तैयार न थे। आपका सच्चा भक्त बनकर ही चैन की सांस लेना चाहते थे।

मोमज्जद (रंगीला पीर) ने जब दोनों भाईयों के दिलों को खुदा की तलब में पुख्ता देखा तो इसी मस्जिद में उन्हें चिश्तिया साबरिया सिलसिला में बैअत से सरफ़राज़ फरमाया। इसी दरम्यान कुछ और ईश प्रेमी भी आगए। उन्हें भी सिलसिला में दाखिल कर दिया। इसके बाद दोनों भाई मोमज्जद (रंगीला पीर) को अपने मकान पर ले आए और जी जान से रंगीला पीर की सेवा में मगन रहने लगे।

मोमज्जद (रंगीला पीर) ने जब मौज़ा बहला में निवास ग्रहण किया तो इस इलाके में ख़बर फैल गई कि ख़ुदा के एक कामिल दुर्वेश (सूफी) अल्लाह की तौहीद बयान कर बहुत सारे लोगों को अपने हलक़ा (घेरा) में दाखिल कर चुके हैं और रोज़-ब -रोज़ इज़ाफा होता जा रहा है। चूँकि मौज़ा बहला और इसके इर्द गिर्द का पूरा क्षेत्र सलफियों से प्रभावित था और अधिकांश आबादी सूफीज्म की अवधारणा के मुनकर (इंकारी) थे और पीर नजदी के अक़ीदे के अनुयायी थे।

मोमज्जद (रंगीला पीर) के आगमन से पूर्व कई अहले तरीकत के इमाम (सूफी-संत) सलफियों के गढ़ में आए लेकिन अहले बहला (Peoples of Bahla) को क़ाइल न कर सके। सिर्फ रंगीला जैसी हस्ती ने कामयाबी हासिल की और अल्लाह

की तौहीद के निशान को हमेशा के लिए इस्तादा कर दिया।

अब तक जो आदमी सिलसिले में दाख़िल नहीं हुए थे और सूफी विचारधारा को बुरा तस्लीम करते थे। वे अपने पेशवा (इमाम) मौलवी अब्दुल क़ादिर साकिन भोगराम के पास गए और शिकायत की कि एक फ़क़ीर बेदीन मुशरिक काफ़िर तिलस्मबाज़ मौज़ा बहला में आकर लोगों को बैअत (मुरीद) करता है; समा (संगीत) सुनता है और ज़िक्र की मजलिस (सूफी अराधना) का आयोजन करता है। चूँकि ये ग़ैर शरह (शरीयत के ख़िलाफ़ कर्मकाण्ड) है और आप (मौलवी अब्दुल क़ादिर)हमारे इमाम हैं, इसलिए वहाँ चलिए। (क्योंकि उसने दीने मुहम्मदी को ख़राब कर रखा है) और उस फ़क़ीर ज़िन्दीक़ से बहस-व-मुबाहसा कर उसे उसके तरीके मरदूदी (तिरस्कृत मार्ग) से तौबा कराइए। यदि तौबा कर ले तो ठीक; नहीं तो उसे खूब अपमानित करके बहला से निकाल दीजिए।

मोमज्जद (रंगीला पीर) की प्रसिद्धि और लोकप्रियता से मौलवी अब्दुल क़ादिर पहले से ही परिचित थे। वे सिर्फ बहाना की तलाश में थे। अपने अनुयायियों से हिम्मत और हौसला पाकर मोमज्जद (रंगीला पीर) से निपटने के लिए तैयार हो गए और एक दिन अपनी पूरी फ़ौज के साथ वक़्ते असर जबकि हलक़ा-ए-ज़िक्र (सूफी गतिविधियाँ) जारी था, मौज़ा बहला में दाख़िल हुए और खड़े-खड़े ज़ाकिरों (ज़िक्र करने वालों) की तरफ मुखातिब होकर कहने लगे- ''बेदीनों, मुरतदों, खबीशों!

तुमने ये क्या कुफ्रिया माहौल बना रखा है? बेहतर है कि जल्द इस मार्ग से तौबा करके मेरी तरफ आ जाओ।'' एक ज़ाकिर ने उनसे अर्ज़ किया- ''मौलवी साहब! आपका भाषण तो खुद आपकी ज्ञानता प्रदर्शित करती है। आप बहुत बड़े पारसा और दीनदार हैं। कलमा की तासीर तो ये है कि इसके पढ़ने से काफ़िर मुसलमान हो जाता है। नारी को नूरी बना देता है। जन्नत की कुंजी देता है। ख़ुदा की क़ुर्बत (समीपता) हासिल होती है। वर्षों के गुनाह माफ हो जाते हैं। दिल की स्याही मिट जाती है। जब ये कलमा क़ाफिर के लिए ऐसी तासीर रखती है तो हम जो उम्मते मुहम्मदी हैं, इसका ज़िक्र करने से और ही ज़्यादा बुलंदी हासिल होगी। आप इसे प्रतिकूल बता रहे हैं और हमें मुशरिक ठहरा रहे हैं। मौलवी साहब आप तो ख़ुद कलमा शरीफ की तौहीन करते हैं। आपके लिए कलमा के विषय में ऐसी बातें बोलना शोभा नहीं देतीं। ख़ुदा और उसके रसूल का अपने दिल में ख़ौफ़ और शर्म करें।'' मौलवी साहब ज़ाकिर की ये बातें सुन गुस्से से बेक़ाबू होकर बोले- ''नामुरादों, बेशर्मों तुम कलमा नहीं पढ़ते हो बल्कि कलमा का मज़ाक उड़ाते हो। ख़ैर मैं अभी लौटता हूँ। कल आकर तुम्हारे पीर (रंगीला पीर) को ज़रूर मज़ा चखाऊँगा और तुम बदकारों को इस बिदअ़त की सजा दूँगा।'' मौलवी साहब ये धमकी देकर चले गए। तब शाह महताबुद्दीन ने सारा माजरा रंगीला पीर को सुनाया और राय तलब की कि क्या किया जाए? क्योंकि मौलवी साहब बहला आकर जरूर हंगामा व फ़साद करेंगे।

रंगीला पीर ने शाह महताबुद्दीन को ख़ुदा का भरोसा देकर इत्मिनान दिलाया कि अल्लाह की ज़ात ज़बरदस्त है, वह यक़ीनन हमारे लिए मददगार साबित होगी। मुझ फ़क़ीर का काम तर्क-वितर्क नहीं है और तुम मौलवी साहब की कही बातों को दिल से निकालकर चैन की सांस लो।

मौलवी अब्दुल क़ादिर साहब अपने गाँव भोगराम से अपने किए वादे के मुताबिक़ घोड़े पर सवार तीन सौ आदमियों का लश्कर लेकर बहला आ धमके और शाह महताबुद्दीन के घर का चारों तरफ से मुहासरा (घेरा बन्दी) कर मोमज्जद (रंगीला पीर) से मुनाजरा करने के लिए ललकारने लगे कि अपने पीर (रंगीला पीर) बुतपरस्त को मेरे रूबरू लाओ। शाह महताबुद्दीन घबड़ाहट में मोमज्जद (रंगीला पीर) से मशवीरा किए बग़ैर मौलवी साहब से कह दिया कि मेरे पीर पश्चिम की जानिब कूच कर गए हैं। वो अभी यहाँ मौजूद नहीं हैं। लेकिन उन लोगों ने इस बात को मानने से इन्कार कर दिया और कहा कि तुम लोगों ने पीर को मकान में छिपा रखा है। इस बात से शाह अफताबुद्दीन को बेचैनी हुई और मोमज्जद (रंगीला पीर) के क़रीब आकर बाहर के हालात से आगाह किया। ग़रज कुछ देर बाद रंगीला पीर ख़ुदा का हुक्म पाकर अपना असा (छड़ी) हाथ में लिए बे ख़ौफ-व-ख़तर हुजूम में जलवागर हुए। आपके जल्वे ने मजमा पर हैबत तारी कर दी। भीड़ तीतर बीतर हो गई। अधिकतर भाग खड़े हुए और कुछ वहाँ अड़े रहे। मौलवी साहब ने मोमज्जद (रंगीला पीर) से सवाल

पूछना शुरू किया- ''ऐ फ़क़ीर सूरत पलीद! तू नमाज़ क्यों नहीं पढ़ता? समा क्यों सुनता है? मुरीदों को सुन्नत के ख़िलाफ़ क्यों तरीका बताता है? और तूने अपनी मूँछें किस दलील के तहत बढ़ा रखी है?'' आप (रंगीला पीर) सबका माकूल जवाब देते रहे लेकिन वे आप की बातें कहाँ सुनने वाले थे, वे तो कुछ और ही इरादा लेकर आए थे। चूँकि वो जुमा का दिन था इसलिए रंगीला पीर को अपने साथ मस्जिद ले गए और बाद नमाज़ जुमा आपको घेर के बैठ गए। उनमें से मौलवी साहब का एक अनुयायी अपने हाथ में कैंची लेकर आपकी मूँछे तराशने के लिए सामने आया तो रंगीला पीर ने उससे फरमाया- ''ज़रा होशियारी से कैंची चलाना क्योंकि जिसकी मूँछें हैं, वो तुमसे ज़बरदस्त है, कहीं ऐसा न हो कि वो तुमसे आकर लड़ बैठे; क्योंकि वो भी तुम्हारे ही भेष में तुम्हारी कुल हरकतों को देख रहा है।'' कैंची वाले ने ये बातें सुनकर कहा कि लगता है कि ये साहिर (जादूगर) है। अपने सिहर (जादू) से किसी शैतान को परदे में छुपा रखा है। ये बातें सुन मौलवी साहब ने कैंची वाले की पीठ थपथपाते हुए कहा कि डरने की कोई ज़रूरत नहीं है, क्योंकि मैंने आयतलकुर्सी पढ़कर तेरा हिसार कर दिया है।

जैसे ही कैंची वाले ने अपनी कैंची रंगीला पीर के लबों के नज़दीक रखी, वैसे ही दफअतन एक ग़ैबी शख़्स सुर्ख लिबादा ओढ़े, आँखे लाल किए हाथ में नंगी तलवार लिए मजमा में कूद पड़ा और डपटकर ललकारा- ''ख़बरदार! अगर फ़कीर की मूँछ

का एक बाल भी तुमने तराशा तो फिर मैं उसी दम तुम सबके सर क़लम कर दूँगा। किसी एक को भी ज़िन्दा घर न जाने दूँगा। तुम्हारी ये मजाल नहीं कि फ़क़ीर की मूँछें तराश सको।'' इस हैरत अंगेज़ वाक्या से मजमा थर-थर कांपने लगा। मौलवी साहब और उनके अनुयायियों के पाजामें नापाक हो गए और अपने होश-व- हवास खो बैठे। किसी तरह गिरते पड़ते अपने-अपने घरों को भागे और पीछे मुड़कर भी न देखा।

सुर्ख पोश ग़ैबी शख्स ने मोमज्जद (रंगीला पीर) का हाथ पकड़कर फ़रमाया- ''सैयद अमजद! (रंगीला पीर) अब तू भी अपनी जगह पर जा और उन हूरपरस्तों से कोई ख़ौफ अपने दिल में न रखना। उन्हें अपने किए की सजा भुगतनी होगी।'' कुछ क़दम चलने के बाद वो ग़ैबी शख्स लुप्त हो गए।

मौलवी साहब जब अपने घर पहुँचे तो देखते हैं कि उनका निजी पुस्तकालय आग लगने से जल चुका है। उनके अध्ययन की सारी धार्मिक पुस्तकें नष्ट हो चुकी हैं। वे सदमे में पड़ गए और अपने अनुयायियों से कहा कि ''तुमलोग मुझे अपने फ़रेब में फंसाकर वहाँ ले गए और खाना ख़राब कर दिया। अफसोस मैंने बहुत नादानी की कि बिना समझे बुझे सिर्फ तुम्हारे कहने पर ऐसे फ़कीर दीवाना-ए-खुदा से जाकर लड़ बैठा और अपने सर पर मुसीबत ले ली और नहीं मालूम आगे मुझ पर क्या आफत (बला) आने वाली है।''

मौलवी साहब अपनी इस हरकत पर खूब शर्मिन्दा होकर

मोमज्जद (रंगीला पीर) की चौखट पर तशरीफ लाए और दस्तबस्ता निहायत अदब-व-एहतराम के साथ माफी़ के तलबगार हुए। मोमज्जद (रंगीला पीर) ने बड़ी विनम्रता से अर्ज किया- ''आप (मौलवी साहब) हमारे मख़्दूम और दीन की रौनक़ हैं। मैं तो एक अदना ख़ादिम हूँ। गुल को खार से क्या निस्बत! मैं तो ख़ुद अपने आने से शर्मसार हो रहा हूँ कि मैं न यहाँ आता और न आपको ये मुसीबत उठानी पड़ती। मैं ही आपके दुःख का कारण बना। मुझे शर्मिन्दा न कीजिए। जो हुआ वह अल्लाह की मर्ज़ी थी। मलाल करने से क्या फायदा! किताबें जलने का ग़म न करें। ख़ुदा अपने फज़्ल-व-करम से अता करेगा।'' मौलवी साहब रंगीला पीर की तसल्ली भरी बातें सुनकर बहुत खुश हुए और खुशी खुशी अपने घर तशरीफ़ ले गए और जब तक मोमज्जद (रंगीला पीर) का बहला में निवास रहा, वो आपकी चौखट पर हाजरी देते रहे।

मौज़ा बहला में मोमज्जद (रंगीला पीर) की उपस्थिति के दौरान दो गुलूकार (गायक) दरबार में आए। इन्हें मारफ़ती ग़ज़लें (आध्यात्मिक कविताएँ) याद थीं। वे आपकी सेवा में कलाम (संगीत) पेश करने की इजाज़त चाही। आपकी इजाज़त पाकर उन्होंने गाना शुरू किया। इसी दरमियान सुल्तान क़बूल (जो रंगीला पीर के मुरीद और बहला वासी थे) परवानों की तरह रंगीला पीर की जानिब लपके। रंगीला पीर ने सुल्तान क़बूल को गले से लगा लिया और वो गले लगते ही मस्ताना दीवाना हो गया

और अललऐलान मुँह से ख़ुदा की तौहीद बोलने लगा।

एक बार शाह महताबुद्दीन के घर में अचानक आग लग गई और हर तरफ से शोला भड़कने लगा। आसमान बिल्कुल साफ था। बादल का कहीं अता पता भी न था। आग लगने की ख़बर मोमज्जद (रंगीला पीर) को दी गई। रंगीला पीर ने दुआ की जो स्वर्णिम अक्षरों से लिखने योग्य है- ''ऐ क़ादिरे मुतलक़! तूने इन लोगों को मुझसे बैअत कराई है और उनसे तूने मुझे पीर कहलवाया है। मेरी आबरू तेरे हाथ में है।'' आपकी ये विनती पूरी भी न हो पाई थी कि आकाश में बादल छा गए और ज़ोरो की बारिश शुरू हो गई। जिसके कारण आग ठण्डी हो गई और मकान सुरक्षित बच गया। बहलावासी इस करामत से चकित रह गए।

—

हक़ हक़ हक़

हिफ़ाज़त

मोमज्जद (रंगीला पीर) किशोरावस्था में एक बार अपने हमजोलियों के साथ दरिया की सैर कर रहे थे कि सबने एक-मत होकर स्नान करने की योजना बनाई और अपने-अपने वस्त्र उतार कर किनारे पर रख दीं तथा यकायक दरिया में कूद पड़े। चूंकि आपके हमजोली तैरने की कला से भली-भांति परिचित थे, इसलिए खूब गोते खा-खाकर दूर दूर तक दरिया में जा निकले लेकिन जब आप दरिया में कूदे, तो तैरने की कला से अनभिज्ञ होने के कारण दरिया के निचले तह पर चले गए और अपना खूब हाथ-पाँव मारा, पर ऊपर न आ सके। जब आपके हमजोलियों ने आपको ऊपर तैरते हुए न देखा, तो सन्देह कर लिया कि शायद सैयद अमजद (रंगीला पीर) डूब गए हैं और फिर उसी वक्त वह गिरफ्तार होने के भय से दरिया से बाहर निकल आए और आपको दरिया में यों ही निमग्न छोड़कर झट-पट अपने-अपने घरों को फरार हो गए और किसी से भी आपके डूबने की चर्चा न की।

इस असहाय स्थिति में आप पूरी तरह बेसुध थे। आपको अपने डूबने का कुछ भी ख्याल न था कि सहसा एक बुजुर्ग हरे रंग का वेश धारण किये और प्रकाशमान् स्वरूप लिये प्रकट हुए और आपके समीप आकर बोले-''हे ईश-प्रेमी! तू कदापि इस हल्के पानी में नहीं डूब सकता क्योंकि अभी तुझको तो बहरे वहदत (एकेश्वरवाद की सागर) में तैराकी करनी है, जिसमें तो विशाल से विशाल हिलोरें और भयानक से भयानक तूफानें उठती हैं। यदि ईश्वर ने चाहा तो तू इन सभी से सुरक्षित रहकर कुशलता के तट पर जा पहुँचेगा। फिर यह अल्पतर पानी भला तेरा क्या बिगाड़ सकता है? ले! अब जल्द उठ और होश में आ तथा कुशलपूर्वक अपने घर जा।''

आप (रंगीला पीर) ये संतोषप्रद बातें सुनकर अपनी आँखें

खोलीं तो अपने को दरिया के तट पर कुशलतापूर्वक खड़ा पाया। न आपका तहबंद भींगा था और न ही जिस्म पर पानी का कुछ प्रभाव था। लेकिन वही बुजुर्ग आपके समक्ष खड़े थे। इस समय आपने नम्रतापूर्वक उनको सलाम कर अर्ज किया- ''हे डूबतों के रक्षक और असहायों के सहायक! अब मुझसे सच-सच बताएँ कि आप कौन हैं? जो ऐसे संकट में मेरी रहनुमाई की और अपनी हमदर्दी से दरिया की लहरों से बचाकर सुरक्षा के तट पर ला खड़ा किया। मैं आपकी इस कृतज्ञता का सहृदय आभारी रहूँगा।'' उस बुजुर्ग ने उत्तर दिया-''मेरा नाम ख़िज़्र है और उस वक़्त मैं लाल सागर पर था, तभी मुझे ईश्वर की ओर से आदेश हुआ- 'तुम फौरन जाओ और मेरे प्रिय मित्र को दरिया से बाहर निकालकर किनारे पर खड़ा कर दो।' अब ऐ सृष्टि-कर्ता के दुलारे! मैं ये आदेश सुन लाखों कोस का रास्ता तय कर तेरे पास आ पहुँचा और ईश्वरीय कृपा से जीवित पाया।'' यह कहकर हज़रत ख़िज़्र ने आपको दो हरे बादाम प्रदान किये और फरमाया-''इन्हें अभी खा ले, क्योंकि इसके खाने से तेरे हृदय पर ईश रहस्य प्रकट हो जाएगा और ईश्वरदत्त ज्ञान भी तुझको उसी वक्त प्राप्त हो जाएगा और शेष ज्ञान की दीक्षा हजरत ख्वाजा कुतुब अली शाह से तुझे प्राप्त होगा और बारह वर्ष तक तुझे उनकी सेवा में रहना पड़ेगा तथा हरदम उनके हर हुक्म का पालन करना होगा।''

हज़रत ख़िज़्र इस उपदेश के उपरांत मोमज्जद के नयनों से ओझल हो गए। तब आपने चारो तरफ अपनी दृष्टि दौड़ाई, पर वे आपको दिखाई न पड़ सके। अन्ततः बहुत छान-बीन के बावजूद भी जब वे न मिल पाए, तो आपने उनके द्वारा प्रदान किये गए हरे बादाम को खा लिया। बस खाते ही आपके हृदय पर सम्पूर्ण ज्ञान की बारीकियाँ स्पष्ट हो गयीं और अनायास ज़बान पर अजीब अजीब गुप्त रहस्य आने लगीं, जिनका जाहिर करना अक़्ल के लिए मनाही है।

हक़ हक़ हक़

कमसिनी

मोमज्जद (रंगीला पीर) को बाल्यावस्था में बकरियाँ चराना बेहद प्रिय था। इस कारण इनके पास पचास-साठ बकरियाँ सदा मौजूद रहा करती थीं और इनका दिनचर्या यह था कि सुबह को उन्हें जंगल ले जाते और शाम तक चराकर पुनः घर वापस लाते। तात्पर्य ये कि दिन- रात उनकी ही सेवा में मगन रहते। इनके पिता कभी-कभी इनके इस ब्यस्तता पर नाराज़ हो जाया करते थे, परन्तु उनकी नाराज़गी का कारण यह होता था कि इनको बकरियों की देख-रेख में अपने खाने-पीने तक की सुध न रहती थी और इस क़दर उनके प्रमोद में रमे रहते कि सुबह का भोजन शाम को और शाम का भोजन सुबह करते। एक दिन इनके पिता ने व्यर्थ कामों में पड़े रहने के कारण इनसे फरमाया ''ऐ लाडले! यद्यपि यह कार्य पैग़म्बरों से सम्बंध रखता है; क्योंकि सभी रसूलों ने प्रारम्भिक अवस्था में बकरियाँ चराई हैं और यह कार्य सभी कार्यों से उत्तम है। इस विशिष्टता के कारण मैं तुम्हारे इस कार्य से अप्रसन्न नहीं हूँ बल्कि बहुत प्रफुल्लित हूँ लेकिन हमारा तुमसे कहने का सिर्फ यह उद्देश्य है कि तुम अपना भोजन समय पर कर लिया करो और इसके बाद जो तुम्हारा दिल चाहे, किया करो। फिर कभी तुमसे कोई पूछ-ताछ न होगी।''

चूँकि मानवीय विशिष्टता सम्पूर्ण मनु संतति में प्रविष्ट है और द्वितीय बाल्यावस्था के कारण इस प्रकार की प्रताड़ना- भरी उक्त बातें इन्हें अप्रिय लगी। तत्क्षण तबीयत में दीवानगी ने सर

उभारा; जुनून सर पर सवार हुई। देशाटन की ओर दिल प्रवृत हुआ। हर वक्त चलने के लिए कटिबद्ध थे। तात्पर्य ये कि एक दिन पिता की अनुपस्थिति में वतन से दक्षिण की ओर कूच कर गए, लेकिन चलते समय इनके साथ कुछ भी न था। यानी न यात्रा के लिए कुछ सामग्री और न ही खाने के लिए कुछ व्यंजन। उस जग पालन-कर्ता के भरोसे अकेले पैदल चले जाते थे। यद्यपि विवशता का एक पथ-प्रदर्शक अवश्य साथ था।

मोमज्जद (रंगीला पीर) को जहाँ कोई मनोहारी बस्ती मिल जाती, उसी में ठहर जाते थे। वहाँ के नगरवासी इनको नासमझ बालक समझकर भली-भाँति स्वागत सत्कार किया करते थे। लेकिन ये सिर्फ एक रात ही निवास करते और फिर सुबह होते ही उस बस्ती से निकल पड़ते। इस प्रकार प्रतिदिन जंगलों और पहाड़ों के रोचक दृश्य का आनन्द लेते हुए कुछ अवधि में बनास नाम की दरिया के तट पर जा पहुँचे। यह दरिया बड़े उत्साह के साथ बह रहा था। मुसाफ़िरों के लिए बिना कश्ती पार करना असम्भव था। उस वक्त दो चार राहगीर और भी इनके साथ थे। दरिया के किनारे एक डोंगी लगी हुई थी, जिसपर चार-पाँच मल्लाह बैठे हुए थे। लेकिन इन मल्लाहों का यह चलन था कि जिन मुसाफ़िरों को दरिया पार करना होता, उन्हें वे डोंगी पर बैठा लेते और जब डोंगी मंझधार में पहुँचती, तो झट ये उसको दरिया में डूबा देते थे और जो मुसाफ़िर उसपर सवार रहते थे, बेचारे दरिया में डूब जाते थे। इसके बाद मल्लाह उनके सामान को चालाकी से हड़पकर फिर डोंगी को दरिया के किनारे लगा दिया करते थे।

मोमज्जद (रंगीला पीर) के साथ जो दूसरे राही थे, वे इन मल्लाहों के करतूत से भली-भांति अवगत थे। इस कारण उन लोगों ने इनसे कहा- ''ऐ लड़के! हमलोग तैरना जानते हैं, इसलिए हमलोग दरिया पार कर जाएँगे और तुम जब और मुसाफ़िर आ जाऐँ, तो उनके साथ बैठकर दरिया पार हो जाना। इन्होंने उनलोगों से फ़रमाया, ''यद्यपि मैं तैरना नहीं जानता, लेकिन ईश्वर के भरोसे मैं तुम्हारे पीछे-पीछे चलता हूँ।'' उन लोगों ने इनकी यह बात सुनकर इन से कहा- ''ऐ बेवकूफ़! दरिया अपनी द्रुतगति पर है, हमारे पीछे न चल; नहीं तो यों ही मुफ्त में बह जाएगा।'' इस प्रकार वे लोग परामर्श देकर दरिया में तैर पड़े और इन्हें अकेले दरिया के किनारे छोड़ दिया। लेकिन जब वे लोग बहुत दूर निकल गये। तब ये भी अपने दिल को मज़बूत करके दरिया में कूद पड़े। उस वक्त ईश्वर की कृपा से ऐसा हुआ कि उन मुसाफ़िरों के पार करने के पूर्व ही दरिया पार हो गये और दरिया का पानी इनकी पिंडिलीयों तक भी न आया। यहाँ से ये मऊ शमसाबाद होते हुए हैदराबाद में पदार्पण किये। इस शहर में उस समय, खामोश शाह नामक एक महात्मा का निवास था, जो एक सिद्ध महात्मा थे और शहर का शासक इनका सेवक था तथा इस शहर के सभी जन इन्हें दिल-व-जान से चाहने वाले थे। उस शहर की इन्हें विलायत हासिल थी।

मोमज्जद (रंगीला पीर) ने इस जगह कुछ दिनों तक निवास किया और फिर इसके बाद भूसावल आ गए। यह शहर इन्हें बहुत ही भाया, लेकिन इनका जी यहाँ भी न लगा और दो-चार दिन इस शहर का सैर करने के बाद नसीराबाद, अजमेर,

जयपुर, भरतपुर और मथुरा होते हुए इटावा आ गए तथा यहाँ से सवारी के माध्यम से मैनपुरी पहुँचे। इनके विरह ने इनके पिता को बेचैन कर रखा था। दिन-प्रतिदिन खिन्न रहा करते थे। इनको मकान पर कुशलतापूर्वक पाकर ईश्वर का बहुत-बहुत कृतज्ञता ज़ाहिर किया।

मोमज्जद (रंगीला पीर) का इस समय से ही ये मामूल था कि रात्रि बारह बजे उठकर स्नान करते और एकान्त में जायेनमाज़ बिछाकर सुब्ह तक अल्लाह अल्लाह किया करते और सिवाय अल्लाह के किसी तरफ रूझान नहीं रखते।

हक़ हक़ हक़

शाफ़ी

मोमज्जद (रंगीला पीर) के पिता टूण्डला में सरकारी कर्मचारी थे। यौवन काल में एक बार आप उनसे मुलाक़ात के लिए जा रहे थे कि इसी बीच मंज़िल क़रीब के आबादी वाले एक बाग़ में घोड़े के बहुत से व्यापारी ठहरे हुए थे। जब आपने वहाँ जमघटा देखा, तो झट उस बाग़ में दाख़िल हो गए। निस्संदेह घोड़े बहुत नायाब (अप्राप्य), मनमोहक, शीघ्रगामी, रंग-बिरंगे और हर नस्ल के थे। उनमें एक घोड़ा बहुत ही नटखट, मनचला और ढीठ था। किसी को भी अपने करीब तक खड़ा होने नही देता था। आपको उसके शरारत का पता नही था। उस वक्त आप उसकी दुष्ट प्रकृति से अनभिज्ञ होने के कारण उसके समीप जाकर खड़े हो गए। तभी उसने अपने स्वभाव के कारण आपके खड़े होते ही सीने पर इस ज़ोर से अपना लात मारा कि आप उसके प्रहार को बर्दाशत न कर सके ओर धड़ाम से ज़मीन पर चारों खाने चित्त गिर पड़े और बेहोश हो गए। इसी बेहोशी की दशा में आप अपने सिरहाने एक बुज़ुर्ग को खड़े देखा, जो आपसे फरमा रहे हैं-''हे परमेश्वर के लाडले! तू घोड़े की एक लात खाने से इस प्रकार घायल हो गया। अभी तो ऐ शुभ मनोरथ के तारे! तुझपर बहुत कुछ अवतरण होने वाला है और तुझे ज़माने की घोर यात्नाएँ उठानी हैं। फिर भला तू कब मर सकता है? अब जल्द उठ, क्योंकि तेरे शरीर को कोई हानि नही पहुँचा है और मैं ईसा हूँ। ईश्वर के हुक्म से तेरे पास आया हूँ और तुझे तन्दुरूस्ती

की शुभ कामनाएँ देता हूँ और इसके साथ ये भी शुभ संदेश तुझे सुनाता हूँ कि वह बेरंग ईश्वर शीघ्रता शीघ्र सम्पूर्ण धर्मावलम्बियों को एक ही रंग में रंग देगा और सभी सहर्ष स्वेच्छा से इस रंगेबेरंग को अंगीकार कर लेंगे।''

जैसे ही यह शुभ संदेश आपके श्रवण-द्वार से मस्तिष्क तक संचारित हुआ। तुरंत ही उठ खड़े हुए और जब आपने सन्देश वाहक को अदृश्य पाया, तो सन्देह उत्पन्न हुआ कि शायद मेरा कलेजा फट गया है। इसी भय के कारण आप अपना हाथ सीना पर रखे हुए अपने पिता की सेवा में हाज़िर हुए और साथ घटित-घटना का सविस्तार वर्णन किया। आपके पिता यह दु:खदायी दुर्दशा सुनकर जल्द ही चिकित्सक को बुलवाया। चिकित्सक ने आपके सीने को ख़ूब ग़ौर से देखा फिर सिर से लेकर पैर तक के सभी अंगों को टटोलकर निहारा। परन्तु कहीं भी माँस या अस्थि में प्रहार का चिह्न न पाया। तब चिकित्सक ने आपके पिता को सांत्वना दिया कि आपके पुत्र के किसी भी अंग पर कोई आघात नही पहुँचा है। ईश्वर ने इनपर बड़ी कृपा की है। अब आप निश्चिंत हो जाएं, कोई आशंका की बात नहीं; अब आपको इसी समय हज़रत ईसा द्वारा कथित बात का ख्याल आ गया और यकीन कर लिया कि वस्तुत: मुझे कोई आघात नहीं पहुँचा है। ईश्वर की असीम कृपा से मुझपर आने वाला संकट कुशलतापूर्वक टल गया। इधर आप इसी सोच में निमग्न थे कि उधर आपके पिता ने झट-पट दो तीन मन अनाज मंगवाकर गरीबों को बंटवा दिया और वास्तविक रक्षक के सम्मुख शीश नवाया।

हक़ हक़ हक़

करीमी

मोमज्जद (रंगीला पीर) युवावस्था में आगरा के रेल विभाग में ड्राईवर नियुक्त थे। सरकार से प्रतिमास तीस रूपया वेतन पाते थे और इसी आय से अपना जीवन-यापन किया करते थे,परन्तु ईश्वर की मंशानुसार इन्हें तो दुनिया की गाड़ी नहीं बल्कि दीने मुहम्मदी की गाड़ी चलाकर उद्दिष्ट स्थान तक पहुँचानी थी।

एक दिन जब ये अपनी ड्यूटी पर थे कि इनके एक प्रेमी दौड़े हुए आए और कहा-''सैयद साहब! आज के दिन तीन महात्मा स्टेशन पर पधारे हैं, जो हृदयावान और प्रतापी दिखते हैं। इसलिए आपके पास आया हूँ कि आप भी चल कर उनसे आशीर्वाद लें। अब जल्दी करें, ऐसा न हो कि गाड़ी खुल जाए और आजीवन हृदय में उनके दर्शन की अभिलाषा शेष रह जाए ओर पश्चाताप् करना पड़े।''

क्योंकि मोमज्जद (रंगीला पीर) लड़कपन से ही ईश प्रेमियों के दर्शन के इच्छुक थे और हरदम हज़रत ख़िज़र के निर्देशानुसार गुरू-प्राप्ति के इच्छुक थे। अविलम्ब उस समय प्रेमी की उक्त बातें सुनकर अपने विद्यमान कार्यों को वैसा ही अधूरा छोड़कर उन महात्माओं की गुणकारी सेवा में दास भाव से उपस्थित हुए। उनमें एक महात्मा ने जो अनुमान से उन दो महात्माओं के शैख़ प्रतीत होते थे, इन्हें देखकर इरशाद फ़रमाया - ''ऐ सैयद अमजद! तू अभी तक नहीं गया! अरे! तुझे तो दरबारे अहदीयत से एक बड़ी नेमत ओर ख़िलाफ़ते कुबरा अता होने वाली है। अब तू अविलम्ब जा और चालक-पद त्यागकर एकांतवास (गोशानशीनी)को ग्रहण कर। चार वर्ष के बाद अल्लाह पाक तुझे कुतबे आलम द्वारा अपनी शिष्यता से विभूषित कर

अपने रबूबीयत के रहस्य से आगाह करके अमरता का पद प्रदान करेगा और अपने सभी प्रेमियों तथा कुल सूफ़ियों से तुझे विशिष्ट और प्रतिष्ठित बनाएगा।''

मोमज्जद (रंगीला पीर) ये शुभ संदेश सुनकर फूले नही समाए और आन्तरिक प्रेरणा से उन्हें प्रीतिभोज के लिए यत्न करनी चाही, परन्तु इस समय इनके पास आतिथ्य हेतु कोई भोज्य-सामग्री उपलब्ध न थी और समय का भी अभाव था। अतः विवश होकर हलवाई की दुकान पर गए और एक रूपये की ढेर सारी गरमागरम पूरियाँ और उत्तम कलाकन्द ख़रीदकर उन शुभ समाचार दाताओं के सम्मुख प्रस्तुत किया। उन महात्माओं ने मात्र स्पर्श कर सब इन्हें वापस कर दिया। तदोपरांत इन्होंने करबद्ध निवेदन किया- ''ऐ महानुभावों! आप मुझे ईश्वर हेतु अपनी वास्तविकता से अवगत कराएँ।'' उन पावन सज्जनों में से एक ने फरमाया- ''ऐ सैयद अमजद! मैं फ़ज़्ले हक हूँ और इन दो महात्माओं में एक इदरीस पैग़म्बर और दूसरे इल्यास पैग़म्बर हैं। मैं सिर्फ़ तुझे आगाह करने आया था, लेकिन सावधान मेरे विषय में किसी अन्य को सूचित न करना। अब तू मेरे समीप से विदा हो, क्योंकि मैं अब ज़्यादा देर नहीं ठहर सकता हूँ।'' तात्पर्य यह कि ये उनके आदेशानुसार उनकी सेवा से विभूषित होकर अपने सम्बन्धित कार्य पर लौट आए।

मोमज्जद (रंगीला पीर) का दिल इसी क्षण नौकरी करने से खिन्न हो गया। फिर और ही सौदे के खरीदार हुए। यकायक हर तरफ से अपने मुँह को फेर लिया। इसके दूसरे दिन अपना इस्तीफ़ा दाखिल कर दिये और घर चलने के लिए तत्पर हो गए। इस्तीफ़ा स्वीकृत होते ही उसी दिन घर के लिए कूच कर गए और फ़िरोज़ाबाद होते हुए अपने मकान पर जा पहुँचे। इनके इष्ट मित्रों और सम्बंधियों ने घर आने का कारण पूछा, तो इन्होंने

बताया- ''मैं नौकरी से इस्तीफ़ा दे चुका हूँ और इसका कारण घर आने का है। अब यदि ख़ुदा ने चाहा, तो आजीवन कभी रोज़गार न करूँगा, क्योंकि दिल को ख़ुदा के अलावे किसी अन्य की अधीनता स्वीकार नहीं। अब आगे वह पालनहार जो कंद-मूल प्रदान करेगा, उसी पर संतुष्ट रहूँगा और इसके अलावे उस पालन-कर्ता से प्रबल आशा है कि मुझको अवश्य ही जीविका बिना किसी बहाने अपने भण्डारा से सुबह और शाम प्रदान करेगा। फिर तो जीविका के लिए चिन्ता करना व्यर्थ है।''

मोमज्जद (रंगीला पीर) ने प्रश्नकर्ताओं से अपना पीछा छोड़ा कर घर के भीतर दाख़िल हुए और उसी तारीख़ से हेल-मेल और सबसे मिलना-जुलना बन्द कर दिया और एकांत में बोरिया बिछाकर ''इल्लल्लाह-इल्लल्लाह'' का जप प्रारम्भ कर दिया। जल्द ही इस तपोबल ने प्रेम के आग को सीने में भड़का दिया। प्रेम की जलन ने तन मन तपा दिया। दीवानों की भाँति बड़ मारने लगे। सारे सम्बंधी और परिजन इनकी यह कैफ़ीयत देखकर निस्संदेह विश्वास कर लिया कि निश्चय ही इनको जुनून सवार हो गया है और इसमें कोई सन्देह नहीं कि इसके दिमाग़ में कुछ फ़तूर हो गया है। अब इसका शीघ्र उपचार करना आवश्यक है, क्योंकि यदि इसका रोग ज़ोर पकड़ लिया तो कठिनाई उत्पन्न होगी और रोग ला इलाज हो जाएगा।

लेकिन मोमज्जद (रंगीला पीर) अपने शुभचिंतकों की इन सब बातों का कुछ भी ख़्याल और परवाह न करते थे। सिर्फ अल्लाह ही अल्लाह की रट में अपने दिल को व्यस्त कर रखे थे। चार वर्ष बाद इस ज़िक्रे लाहूती का इस कदर प्रभाव पैदा हुआ कि जो कोई व्यक्ति इनके सम्मुख से गुजरता, फ़ौरन बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ता था। जब नगर वासियों पर ये रहस्य उजागर हुआ, तो फिर सबने इनके समक्ष आना छोड़ दिया और

इनके मकान से दूसरी तरफ होकर आवागमन प्रारम्भ किया।

जब मोमज्जद (रंगीला पीर) का चार वर्षीय एकांत तप-व्रत (चिल्ला) पूर्ण हुआ, तो एक दिन अपने दिल को समझाया, ''ऐ नासमझ रंगबाज! क्या इस प्रभावी उत्पादन दृश्य से तुझे लक्ष्य की प्राप्ति होगी? ये तो पूरा-का-पूरा इन्द्र-जाल और धोखाधड़ी है, ज़रा ख़्याल करो, जब तुझे प्रभाव उत्पादक (ईश्वर) की प्राप्ति न हो सकी तो फिर ये सब निरर्थक है और फिर इन ढकोसलों के दिखावे से हरगिज ईश-प्राप्ति नहीं हो सकती है। अब चल और वास्तविक परम-मार्ग के पथ-प्रदर्शक की तलाश में लग, जिसकी तुझे खुशखबरी पूर्व दी जा चुकी है, क्योंकि वही तुझको यार के मकान में पहुँचाएगा।''

मोमज्जद (रंगीला पीर) के दिल ने इस लाभदायक उपदेश को स्वीकृत कर लिया और संकेत चलने का किया। ये उसी वक्त तपोभूमि से बाहर निकल आए और तुरंत 'टूण्डला' के लिए प्रस्थान कर गए एवं दो-तीन दिन की अवधि में वहाँ जा पहुँचे। चूँकि नगरवासियों से इनका पूर्व परिचय था। इस कारण वे लोग इनको पहचान लिए और इन्हें अपने आवास पर ले गए और इनके हाथ-मुँह को धुलवाया। इसके बाद खूब ही जीभर भोजन कराया और हर तरह की सुविधा उपलब्ध कराई।

मोमज्जद (रंगीला पीर) ने सप्ताह भर उन प्रियजनों के यहाँ निवास किया, परन्तु इनको अपने दिल की बेचैनी से पल-भर भी चैन न मिला, क्योंकि दिल में मिलन की लगन थी, नयनों को दर्शन की ललक थी, सीने में विरह-कंट की कड़क थी, छाती में वियोग-वेदना की कसक थी, जुनून का पंजा गिरेबान को तार-तार किया था, यार की जुदाई ने बेकल कर रखा था। आत्मा तन में बैचेन थी। उस विलुप्त के ख्याल ने दीवाना बना रखा था। हर पल दर्पण सदृश स्पंदहीन थे। हर वक्त साजन के दिव्य-झलक के

प्रतीक्षक थे। सिर्फ उसके न देखने का इनको मलाल था। सत्रह वर्ष तक उससे मिलने हेतु सर्वोन्मुखी दौड़ धूप की पर, न वह मिला, न उसकी सूचना मिली और न अपने निवास का कुछ पता दिया। मुफ्त यों ही वन-वन की धूल फांकी और वर्षों गली-गली की ठोकरें खाईं। अफ़सोस ऐसा चुप-चुप कोना में मुहँ छुपाए आसन जमा रखा है कि ज़रा भी उसका पता ही नहीं मिलता।

जब मोमज्जद (रंगीला पीर) का दिल ज्यादा घबरा उठता, तो अनायास चीख़-व-पुकार के साथ चिल्ला उठतेः

ऐसी किस पर्दा में बैठी है, ऐ पर्दानशीं।
हर तरफ ढूंढा, मगर तेरा निशाँ मिलता नहीं॥

तात्पर्य ये कि इसी बेचैनी और तड़प में इनके जीवन का क्षण-क्षण बीत रहा था कि एक दिन ईश्वर की ऐसी कृपा हुई कि एक प्रिय मित्र ने गृहस्वामी से आकर कहा -''सुन रहे हैं कि आज हज़रत शैखुल वक़्त शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी (जो चिश्तिया साबरिया सिलसिला के एक सुप्रसिद्ध महात्मा हैं) पधारे हैं और मस्जिद में विराजमान हैं, जो बड़े सच्चे ईश-मीत हैं। ज्ञान-रत्न और दक्षता के सम्पूर्ण गुणों के भण्डार हैं। सद्‌गुणों तथा प्रतिष्ठाओं से परिपूर्ण हैं। विभिन्न चमत्कारों में बेमिसाल हैं।''

मेरी राय है कि सैयद साहब (रंगीला पीर) को भी ऐसे सर्वप्रिय महात्मा की सेवा में ले चलो! क्या अजब है कि उनकी दयादृष्टि से इनका दिल ठहर जाए।'' उन शुभचिंतकों ने इस परामर्श को बहुत पंसद किया और उसी वक़्त इनको अपने साथ लेकर मनोवांछित शाह साहब (हज़रत शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी) की सेवा में उपस्थित हुए और आदाब बजा ला कर एक तरफ़ बैठ गए। हज़रत साहब (हज़रत शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी) ने मोमज्जद (रंगीला पीर) को देखकर फरमाया- ''वाह! क्या ख़ूब रैनी से शहाब टपक रहा है सिर्फ रंगरेज़ की ज़रूरत है।'' इन्होंने

विनित भाव से अर्ज़ किया- ''या शाह! पूर्व ही दो महात्माओं ने रंगरेज़ का निशान दे दिया है और वह रंगरेज़ आप ही हैं और इसी आप की तलाश में एक लम्बे समय से हैरान और परेशान हूँ। तलाश करते-करते पैरों में छाले पड़ गए। सौभाग्यवश इस समय आपका पावन दर्शन उपलब्ध हुआ। लीजिए अब यह जान निछावर करने वाला मौजूद है। जल्द एक डूब दे दीजिए। देर न कीजिए। उम्मीदवार इस बात का हूँ कि धब्बा ज़रा भी न रहने पावे। सर से पैर तक एक रंग हो जाए। अगरचे कपड़े साफ नहीं हैं, लेकिन रंग चोखा है ओर रंगनेवाला भी पूरा है॥''

मोमज्जद (रंगीला पीर) की उपर्युक्त बातें सुनकर हज़रत साहब (हज़रत शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी) मुस्कुराए और इन्हें अपने क़रीब बैठाकर चिश्तिया साबरिया सिलसिला में अपनी शिष्यता से विभूषित किया और जिसकी इन्हें वर्षो से तलाश थी, उसका निशान इन्हीं के अस्तित्व में बताया।

वल्लाह! आप पहले महबूबे हक़ीक़ी का दर्शन ख़्याल की आँखों से किया करते थे लेकिन जब उसके रहस्य से आगाह हुए तो उन्हीं आँखों से उसका दर्शन मयस्सर हो गया। सुब्हानल्लाह! ला-वुजूद बा-वुजूद और बा-वुजूद को ला-वुजूद देखा। फिर उस बा-वुजूद की बारगाह में यों अर्ज़ किया—

आशिक़े ज़ार हूँ तो तेरा हूँ — नाज़ बरदार हूँ तो तेरा हूँ
बाग़बाँ तेरे बाग़े हस्ती में — गुल हूँ या ख़ार हूँ तो तेरा हूँ
नश्श-ए-मए से कुछ नहीं मतलब — मैं तो सरशार हूँ तो तेरा हूँ
दीन-ओ-दुनिया से कुछ नहीं है ग़रज — हाँ तलबगार हूँ तो तेरा हूँ
गरचे आसी हूँ पर मैं सय्यद हूँ — मैं गुनहगार हूँ तो तेरा हूँ

——

हक़ हक़ हक़

सनम

हज़रत ख्वाजा कुतुब अली शाह नन्दानवी बनारसी अपने युग के एक प्रसिद्ध महात्मा थे, जिनकी प्रसिद्धि दूर-दूर तक फैली हुई थी। आप अपने उपदेश में ख़ुदा से सच्ची मोहब्बत और मानव-सेवा पर बहुत जोर दिया करते थे। आपने सभी धर्मों को एक सूत्र में बाँधने के लिए प्रशंसनीय कार्य किया।

हज़रत कुतुब अली शाह नन्दानवी बनारसी का जन्म स्थान उत्तर प्रदेश जिला आजमगढ़ नन्दाना है। आपके पिता का नाम शैख़ रौशन पीर बख़्श है। आपने तीन बार पैदल और कई बार सवारी से भी हज यात्रा की है। आपने ख़ुदा के नाम को बुलन्द करने के लिए बहुत से कार्यों को अपने हाथों सम्पन्न कराया, जो गौरवमय है। नन्दाना में आपके द्वारा निर्मित मस्जिद "मस्जिदे शाह" अपने आप में एक मिसाल है। क्योंकि यहाँ आपके द्वारा हज से लाया गया काबा का एक काला पत्थर और हज़रत बाबा फरीद के कमर की जंजीर का एक टुकड़ा अवस्थित है, जिसका वर्ष में एक बार दर्शन कराया जाता है, जिससे लोग फ़ैज़याब होते हैं। चकिया में सैयद साहब का मकबरा, एक मस्जिद और एक कुआँ का निर्माण कराया। इसके अतिरिक्त बनारस शरीफ में अपने धर्मगुरू मख़दूम साबिर बनारसी का रौजा और रूदौली शरीफ में मख़्दुमुल औलिया मख़्दूम अब्दुल्हक रूदौलवी रह0 अ0 का रौजा नए सिरे से निर्मित कराया। आप सवा तोला से अधिक आहार ग्रहण नहीं करते। आपके अनगिनत करामात हैं। हज़रत ख्वाजा कुतुब अली शाह नन्दानवी बनारसी का निधन रूदौली शरीफ में 26 रजब 1319 हि0 तदनुसार 8 नवम्बर 1901 ई0 को शनिवार

के दिन 8 बजे रात्रि-काल हुआ। आपके शव को आपके शिष्यों द्वारा रूदौली शरीफ से बनारस शरीफ लाया गया और हज़रत मख़दूम साबिर बनारसी के रौजा के पूरब ओर उत्तर दिशा में दफनाया गया, जिसपर एक आलीशान गुम्बद का निर्माण हुआ, जो अजमेर शरीफ का नमूना है। आपके मज़ार पर इत्रे हिना पेश की जाती है, क्योंकि इसकी खुशबू आपको अत्याधिक पसंद थी।

ख़्वाजा कुतुब अली शाह नन्दानवी बनारसी के शिष्यों की संख्या एक लाख थी, जिनमें अधिकतर सांसारिक थे। आप हमेशा डोली पर चला करते थे और आपके साथ सवा सौ शिष्य (जो सिद्ध महात्मा भी थे) हर वक्त दिन-रात मौजूद रहा करते थे। परन्तु उनमें से किसी को यह ज्ञान न था कि मोमज्जद (रंगीला पीर) आपके योग्यतम् शिष्य और चहेते खलीफा ही नहीं बल्कि वास्तविक जानशीन भी हैं। हज़रत शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी[रह0अ0] को अल्लाह पाक ने ग़ौसीयत का पद प्रदान किया था। आप आजीवन जप-तप में व्यस्त रहे और जीवन का एक पल भी ख़ुदा की आराधना के अतिरिक्त दूसरे कार्यो में बेकार न किया। ज़ोहद-ओ-तक़वा (भक्ति और परहेज़गारी) से कभी अलग न हुए। आप दुआए हैदरी के आमिल (साधक) थे। अक़ीदतमन्दों का सैलाब आप की तरफ आता रहता। आप के एक लाख मुरीदों में से सवा सौ मुरीद आपके इर्द गिर्द रहते, जिन्हें आपके भण्डारे से दो वक़्त भोजन मिलता। जो मुरीद ख़ुश्क ग़िज़ा(ड्राई फुड) लेते, उनको तीन छटांक चावल और एक छटांक दाल दे दी जाती और कपड़ा वे अपने खर्च से पहनते थे।

ख्वाजा हाजी कुतुब अली शाह नन्दानवी बनारसी के गुरू महाराज मख़्दूम साबिर बनारसी बहुत ही उच्च कोटी के महात्मा थे। वे सौंदर्य-जगत में यूसुफ द्वितीय थे। स्त्रियाँ इनके हुस्न पर

सदा मोहित रहा करती थीं। इनका निधन 5 सफर 1277 हिजरी तदनुसार 22 अगस्त 1860 ई0 को बनारस शरीफ में हुआ और वहीं इनका मज़ार भी है,जिसपर इनके योग्यतम् शिष्य व ख़लीफ़ा (हज़रत ख़्वाजा कुतुब अली शाह नन्दानवी बनारसी) द्वारा 1314 हि0/1896 ई0 में एक भव्य गुम्बद का निर्माण हुआ, जो कलियर शरीफ का नमूना है और इस रौज़ा के तल की वर्तमान ऊँचाई सड़क से इतनी है कि उसपर चढ़ने हेतु 36 सिढ़ीयाँ बनी हुई हैं।

मख़्दूम साबिर पाक बनारसी के गुरू महाराज का नाम हज़रत क़ारी नुरूलहक रामपुरी (मौज़ा समोई, जिला फ़र्रूख़ाबाद) और उनके गुरू का अली मस्त पीलीभीती सुम्मा संभली और उनके गुरू का मियाँ साहब पीलीभीती सुम्मा पिपलवी (पिपली शरीफ़, ज़िला रामपुर, यू0पी0) और उनके गुरू का हज़रत अबदुल करीम आखुन फकीर रामपुरी(हलक़ा वाली ज़ियारत, जिला-रामपुर यू0पी0) और उनके गुरू का हज़रत इनायत शाह बहलोलपुरी (लुधियाना) और उनके गुरू का हज़रत सैयद शाह मीरान भीक तिरमिजी सीवानवी कोहरामवी ठसकवी और उनके गुरू का हज़रत शैख़ अबुल मोआली अम्बेठवी (सहारनपुर, यू0पी0) और उनके गुरू का हज़रत शैख़ दाऊद बंदगी गंगोही और उनके गुरू हज़रत शैख़ मोहम्मद सादिक़ गंगोही और उनके गुरू हज़रत शैख़ अबू सईद गंगोही और उनके गुरू हज़रत मौलाना निजामुद्दीन बल्खी और उनके गुरू हज़रत शैख़ मौलाना जलालुद्दीन थानेसरी और उनके गुरू हज़रत मौलाना शैख़ अब्दुलकुद्दूस गंगोही और उनके गुरू हज़रत शैख़ मोहम्मद अहमदी और उनके गुरू उनके पिता हज़रत शैख़ अहमद आरिफ अहमदी और उनके गुरू उनके पिता हज़रत शैख़ मख़्दूम अहमद अब्दुलहक़ रूदौलवी और उनके गुरू हज़रत शैख़ जलालुद्दीन कबीरूल औलिया पानीपती और उनके

गुरू हज़रत शैख़ शमसुद्दीन तुर्क पानीपती और उनके गुरू हज़रत सैयद अलाउद्दीन अली अहमद साबिर कलयरी और उनके गुरू हज़रत बाबा फ़रीद गन्जे शकर अजोधनी और उनके गुरू हज़रत ख्वाजा कुतबुद्दीन बख़्तियार काकी और उनके गुरू हज़रत ख्वाजा मोईनुद्दीन हसन चिश्ती अजमेरी और उनके गुरू हज़रत ख़्वाजा उस्मान हारूनी और उनके गुरू हज़रत ख़्वाजा हाजी शरीफ़ ज़िन्दनी और उनके गुरू हज़रत ख़्वाजा मौदूद चिश्ती और उनके गुरू उनके पिता हज़रत ख़्वाजा नासेरूद्दीन अबू युसुफ चिश्ती और उनके गुरू उनके मामू हज़रत ख़्वाजा अबू मोहम्मद अब्दाल चिश्ती और उनके गुरू उनके पिता हज़रत ख़्वाजा अबी अहमद अब्दाल चिश्ती और उनके गुरू हज़रत ख़्वाजा अबू इश्हाक शामी चिश्ती और उनके गुरू हज़रत ख़्वाजा मुम्शाद ऊलू दिन्नौरी और उनके गुरू हज़रत ख़्वाजा हुबैरा बसरी और उनके गुरू हज़रत ख़्वाजा हुज़ेफ़ा मरअशी और उनके गुरू हज़रत ख़्वाजा सुल्तान इब्राहीम बिन अदहम बल्ख़ी और उनके गुरू हज़रत ख़्वाजा फुजैल इब्ने अयाज और उनके गुरू हज़रत ख़्वाजा अब्दुल्वाहिद बिन ज़ैद और उनके गुरू हज़रत ख़्वाजा हसन बसरी और उनके गुरू हज़रत मौला अली करमुल्ला वजहु (चतुर्थ खलीफा) और उनके गुरू पैग़म्बरे इस्लाम हज़रत मोहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम।

नोट:- आगे के अध्याय में हज़रत सैयद शाह अमजद अली सुल्तान रंगीला के गुरू महाराज हज़रत ख्वाजा कुतुब अली शाह नन्दानवी बनारसी को हज़रत साहब से सम्बोधित किया जाएगा। हज़रत ख़्वाजा कुतुब अली शाह नन्दानवी बनारसी का नाम हज़रत ख़्वाजा कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी भी है। दोनों नामों का किताब में उल्लेख मिलता है।

——

हक़ हक़ हक़

फ़रमान

जब आप (रंगीला पीर) 'टूण्डला' में गुरूमुख (मुरीद) हो चुके तो इसके बाद आपने हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) की सेवा में रहना प्रारम्भ कर दिया। एक दिन हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) ने आपसे फ़रमाया– ''ऐ सैयद अमजद! तुम पटियाला जाओ और वहीं पर रह कर एक चार माह का तप-व्रत (चिल्ला)पूरा करो परन्तु किसी भी क़ीमत पर तुम अपने तप-व्रत (चिल्ला) की जगह से कहीं मत जाना और चिल्ला के खत्म होते ही मेरे पास फ़ौरन चले आना लेकिन चौकस रहना और दृढ़ता के साथ वहाँ जमे रहना; परिशान बिल्कुल न होना।''

आप (रंगीला पीर) हज़रत साहब(शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) की उपरोक्त बातें सुनकर उसी वक्त उनसे विदा होकर पटियाला के लिए प्रस्थान कर गए। आठ दिन की यात्रा के पश्चात् 'ग़ाजियाबाद' पहुँचे पर शहर में न जाकर बाहर ही दक्षिण ओर एक वृक्ष की छाया में बिस्तर लगा लिया और पूरी रात जागते व्यतीत कर दी। प्रातः होने पर वहाँ से दिल्ली के लिए प्रस्थान कर गए और वहाँ पहुँचकर हज़रत ख्वाजा कुतबुद्दीन बख्तियार काकी रह0 अ0 और हज़रत निज़ामुद्दीन औलीया रह0अ0 और इसके अतिरिक्त कई अन्य मजारों पर भी जा कर हाज़िरी दी एवं रात भर वहाँ रहकर पुनः पानीपत के लिए प्रस्थान

कर गए। जब आप इस शहर में पहुँचे, तो सर्वप्रथम हज़रत बू अली शाह क़लन्दर पानीपती के मजार का ज़ियारत किया। फिर इसके पन्द्रह दिनों बाद पटियाला के जंगल में जा पहुँचे। ये जंगल बहुत ही भयानक था, कोसों दूर तक आबादी का कोई अता-पता न था। खाने पीने की वस्तुएँ बाजार में भी नहीं मिल पाती थीं। जंगल ऐसा था कि उसे करबला का नमूना कहिए! आपका (रंगीला पीर) भूख-प्यास से बुरा हाल था, परन्तु आपकी जिह्वा पर न कोई उलाहना था ओर न कोई शिकायत थी। आपके लिए रास्ता चलना कठिन था, लेकिन आपका दिल हर पग चुस्त और फुर्तीला था। प्रसन्नतापूर्वक साथ बराबर चले ही जा रहे थे कि यकायक ऐसे वक्त पर पीर (गुरू) का मदद आ पहुँचा कि एक आदमी ग़ैब से जाहिर हुआ और क़रीब आकर आपसे यों गोया हुआ, ''ऐ ईश्वर के भक्त! क्या तुझे भूख लगी है? कुछ खाने की इच्छा है? जल्द बता!! जिस चीज की तुझे ख़ाहिश है। मुँह को कम्पित कर, सब कुछ पैदा हो जाएगा! क्योंकि ईश्वर का खजाना विस्तृत है।'' आपने जवाब दिया, ''ऐ ईश-प्रेषित! न मैं भूखा हूँ! न खाने की ख़ाहिश है और न किसी चीज की चाहत रखता हूँ! ईश-दर्शन का प्यासा हूँ, सिर्फ उसे देखने की तमन्ना है यद्यपि वह अपना संकेत दे चुका है, पर मुख दिखाने में संकोच और झिझक करता है। यह उसकी ही संकोच और बेपरवाही ने मुझको वन-वन फिरा रखा है और दर-ब-दर फिरा कर बेघर किया है। आपके पास यदि उसके संकोच के दूर करने का कुछ उपाय है, तो कृप्या बता दीजिए, नहीं तो अपना रास्ता धरिए।''

वह ग़ैबी आदमी मोमज्जद (रंगीला पीर) की यह प्यास

भरी उक्त बाँतें सुनकर जवाब दिया - ''ऐ सैयद अमजद! (रंगीला पीर) तू अभी से घबरा गया और थोड़ा-सा भी कष्ट न झेला कि मुँह से बोल पड़ा- ''ऐ ईश्वर का प्रलोभी मित्र! वह अपने प्रेमियों को सैकड़ों कष्ट और दुःख देता है और उनके पहनावे को अपमान की कैंची से कतर-कतर कर टुकड़े-टुकड़े कर वर्षो उनके हृदय को विरह-अग्नि से जलाता है और अपना निशान देकर फिर बेनिशान हो जाता है। अब प्रेम में तुझे शिकवा-शिकायत करना शोभा नहीं देता।''

तत्पश्चात् उसने आपको दो स्वादिष्ट गरम पराठे और एक कूजा पानी का देकर कहा, ''इसे खाकर पानी पी ले और अपने दिल को उदास न कर, क्योंकि इस उद्विग्नता और व्याकुलता से लाभ क्या है? कुछ दिन सहन कर, ईश्वर की कृपा पर दृष्टि रख, शीघ्र ही अपने उद्देश्य में सफल होगे और ऐ ईश-आकांक्षी! वह तेरे क़रीब है, सिर्फ न देखने का कुसूर है, वरन वह कब तुझसे दूर है?'':

कहाँ है पर्दा, किधर है मख्फ़ी कब उसका मुखड़ा नकाब में है।
कुसूर अपनी निगाह की है, वरना वह कब हिजाब में है॥

मोमज्जद (रंगीला पीर) उसकी यह रहस्यमय बाँतें सुनकर आश्चर्यचकित रह गए और कुछ भी उत्तर मुँह से न दिए, भौचक्कों की तरह उसके चेहरे को तक रहे थे, लेकिन जब उसने वह पराठे इन्हें दिया, तो आपने उसकी रूष्टता के कारण उनको ले लिया और शीघ्र ही खाना प्रारम्भ कर दिया! चूँकि आपको पहले से ही भूख लगी थी और उसपर स्वादिष्ट पराठे, खाने को और भी ज्यादा स्वादकर बना दिया था। जब आप खा चुके तो

फिर वही पानी कूजा का पी लिये और आप के पीते ही वह ग़ैबी आदमी नजरों से अदृश्य हो गया। नहीं मालूम कि वह बुजुर्ग कौन थे? जो कि इस निराश-जनक स्थिति में आपके हमदर्द और मददगार साबित हुए।

जिस समय आपकी तबीयत को खा पीकर ताजगी का एहसास हुआ, फिर तेजी के साथ अपने पैरों को आगे बढ़ाया और संध्या तक पटियाला में प्रवेश कर गए। लेकिन आपके दिल ने शहर में रहना पसंद न किया। शहर के बाहर एक टूटा-फूटा मकान खाली पड़ा हुआ था और उधर से किसी आदमी का आना-जाना भी न था, इसलिए आपने उसी में रहना उचित समझा ओर जिस 'शग़ल' (क्रिया) की हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) ने शिक्षा दी थी, उसी में रम गए।

आप (रंगीला पीर) चार महीने तक उस मकान में रहे, परन्तु आपके पास कोई खाद्य-सामग्री न थी; किन्तु बिला नागा एक आदमी आपको आ कर दोनों समय भोजन खिला जाता था और एक घड़ा पानी का भरकर दे जाता था, पर वह कभी भी आपसे बातचीत न करता था। चुप-चाप प्रकट होता था और चुप-चाप ही अदृश्य हो जाता था और न आपने कभी उससे पूछ-ताछ ही किया। जब तप-व्रत (चिल्ला) की अवधि पूरी हुई तो वियोग की आग आपके सीने मे धधक उठी। आपका वहाँ ठहरना अब बिल्कुल दूभर लगने लगा, इसलिए उसी समय अपना बिछौना बाँधकर यात्रा के लिए चल पड़े और सहारनपुर, बिजनौर एवं मुरादाबार होते हुए बरेली शरीफ जा पहुँचे। रास्ते की थकान के कारण आपने दो-चार दिन इस शहर में आराम किया। यहाँ पर

हज़रत शाह नियाज़ रहमतुल्ला अलैह का मज़ार है, चूँकि आप रास्ते के थके-हारे थे, इसलिए मजारे पाक का दर्शन न कर सके। जब आपकी तबीयत चुस्त हुई, फिर लखनऊ जाने को तैयार हुए और पाँच दिन की अवधि में लखनऊ पहुँचे और वहाँ पर एक दिन रहकर रूदौली शरीफ जिला बाराबंकी को प्रस्थान कर गए। यहाँ पहुँचने पर ज्ञात हुआ कि हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) इसी जगह आए हुए हैं और दरगाह (हज़रत शैखुल आलम मख़दूम शैख अहमद अब्दुलहक़ रूदौलवी रह0अ0 की दरगाह) में विराजमान हैं। आप यह खुशखबरी सुनकर बहुत खुश हुए। फ़ौरन हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) की सेवा में उपस्थित हुए और अभिनन्दन कर अपने शीश को उनके चरणों पर अर्पण कर दिये। हज़रत साहब ने अपने कृपामय हस्त को आपके सर पर फेरा और नमित मस्तक को उठाकर वृत्तान्त के विषय में पूछ-ताछ किया। आप पर जो कुछ भी हुआ था, उसे शब्द-ब-शब्द एक-एक करके विस्तार पूर्वक बता डाला। इसके पश्चात् हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) ने अपने ही साथ आपको क़ाफ़िला में रहने का आज्ञा दे दिये और आपने सहर्ष उसे स्वीकार कर लिया।

हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) के साथ प्रत्येक जगह, प्रत्येक समय सवा सौ शिष्य और सेवक उपस्थित रहा करते थे और जब वे किसी यात्रा पर निकला करते थे, तो वह जन-समूह एक क़ाफ़िला का रूप धारण कर लेता था। आप अधिकांशतः पालकी पर ही चला करते थे और आपके कुल मिलाकर शिष्यों की संख्या एक लाख थी। लेकिन शिष्यों की

संख्या इतनी अधिक होते हुए भी, जो स्थान मोमज्जद (रंगीला पीर) को मिल पाया, वह किसी और को उपलब्ध न हो सका। आप अपने गुरू के परम प्रिय शिष्य, चहेते खलीफा और वास्तविक उत्तराधिकारी थे। आपके दायित्व में हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी[रह0अ0]) की कहारी (डोली ढोने और पानी भरने का काम) और पैर दाबने की खिदमत सुपुर्द थी। रंगीला पीर को जब आख़िरी गुस्ल दी जा रही थी तो आपके कन्धों पर कहारी के चिह्न दिख रहे थे।

रंगीला पीर को किसी पद का लोभ नहीं था, जिसका प्रमाण ये है कि आपके पीर (हज़रत शाह हाजी कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) ने अंतिम क्षण में रूदौली शरीफ़ से पर वाले शाह साहब के पता पर रंगीला पीर को एक चिट्ठी भेजा कि तुम (सैयद अमजद) आओ और मेरा पद-भार ग्रहण करो, जिसके उत्तर में आपने लिखा- ''हुज़ूर! आपका हुक्म सर आँखों पर! परन्तु मेरी हार्दिक इच्छा ये है कि ये पद किसी और गुरूभाई को दे दिया जाए और मेरा स्थान अपनी जूतियों में रहने दिया जाए।''

——

हक़ हक़ हक़

इनायत

एक बार आप (रंगीला पीर) रूदौली शरीफ में अपने हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) की सेवा में थे कि एक दिन आपके दिल की ख़ाहिश दूध पीने की हुई, क्योंकि वह समय रात का था और सभी हलवाईयों की दुकानें बंद हो चुकी थीं, इसलिए कोई भी आदमी दूध लाने से विवश था लेकिन आपकी हठदिली ने आपको बेचैन कर रखा था, इसलिए उसकी इच्छा की पूर्ति के लिए आप कुएँ की जगत पर जा बैठे और उसी घड़ी अपने हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) से याचना कर बैठे कि उनकी इच्छा की पूर्ति फ़ौरन की जाए, नहीं तो वे कुएँ में गिरकर आत्महत्या कर लेंगे, क्योंकि उनका कहना है कि जब उनका मन ही प्रसन्न न हुआ तो उनका जीवित रहना निरर्थक है।

शीघ्र ही आपके गुरूभाईयों ने आपको आकर समझाया- ''ऐ सैयद! ये क्या अशिष्टता करते हो? जरा शर्म तो करो! इस प्रकार ढीठ न बनो, ये तुम्हारा हठ करना अच्छा नहीं है; क्योंकि आधी रैन गुजर चुकी है और इतनी रात को हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) कहाँ से दूध मंगवा कर देंगे? ऐ भाई! जरा बर्दाश्त करो! प्रभात होने दो! फिर बहुत सारा दूध आ जाएगा। अब ऐसी शीघ्रता करना तुम्हें शोभा नहीं देता।''

गुरू भाईयों का आपसे ऐसी बातें करना, आपके दृष्टिकोण से उन लोगों की नासमझी का कारण था, क्योंकि वे गुरू की अलौकिक-शक्ति से अनभिज्ञ थे। आपने उन्हें जवाब दिया- ''ऐ साहबों! मैं किसी भी क़ीमत पर अपनी हार्दिक इच्छा से न फिरूँगा, क्योंकि वह कौन सी ऐसी चीज़ है जो गुरू के खजाने में नहीं है। गुरू की ज़ात तो दोनों जहान की नियामत से मालामाल है। यहाँ किसी भी चीज की कमी नहीं है; फिर तो दूध की कुछ भी वास्तविकता नहीं है।''

इधर तो यह तर्क-वितर्क हो रहा था, उधर किसी शिष्य ने हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) से निवेदन किया-

''या पीर! आपके सभी सेवक सैयद साहब को समझा रहे हैं, किन्तु वह हठधर्मी किसी की भी बात नहीं मानते हैं ओर कूएँ में गिरने हेतु बैठे हैं। अब बताईये कि आपके सेवक उनके साथ कैसा बर्ताव करें? आपने निर्देश दिया- ''ऐ प्यारे! सैयद बड़े चंचल हैं! गजब के हठीले हैं! नादान नहीं हैं, बल्कि सयाने हैं! तुम उन परामर्शदाताओं से जाकर कहो कि वह सब अभी उनके समीप से चले आवें और सैयद को ज्यादा तंग न करें। यहाँ आकर खुदा का तमाशा देखें; क्योंकि अल्लाह पाक सैयद को दूध पिलावेंगे या उनको कूएँ में गिराएंगे। इन दो बातों में से एक बात अवश्य होगी क्योंकि इधर सैयद 'छबीले' हैं, उधर वह 'रंगीले' हैं। अब देखिए अपने छबीले को 'रंगीले' कैसे मनाते हैं। हम भी उनके दयालुता के प्रतीक्षक हैं।''

हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) सूचना देने वाले को यह निर्देश देकर तुरंत अपने हुजरा में चले गए। कुछ देर बाद एक आदमी अहिर के रूप में प्रकट हुआ और झट-पट आपके निकट आकर कहने लगा, ''ऐ सैयद! ये दूध तेरे गुरू ने भेजा है। फ़ौरन इसको पी ले!'' आप प्रफुल्लित हो कर उससे बटली ले लिया और झट मुँह लगा कर सारा दूध गट कर गए तथा खाली बटलोई को वापस दे दिया। वह आदमी लेकर तुरन्त किसी तरफ को चला गया और आप (रंगीला पीर) हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) की बारगाह में निहायत खुशी के साथ हाज़िर हुए। हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) आपके उपस्थित होने के पूर्व ही अपने हुजरा से निकलकर बाहर विराजमान हो चुके थे। उन्होंने आपको देखते ही कहा- ''सैयद कहो! खैर तो है!! क्या तुमको दूध मिल गया है? जिसकी खुशखबरी हमें देने आए हो।''

आपने अर्ज किया-''या हज़रत! क्या खूब! दूध तो स्वयं आप वाला की ओर से प्रदान हुआ है; फिर मुझसे पूछने की क्या आवश्यकता है? ''हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) ने आपसे कहा- ''सैयद! हमें तो इस बात की ज़रा भी खबर नहीं है, ऐसा आभास होता है कि स्वंय अल्लाह पाक ही तुम्हें दूध दे गए हैं यह तो उनकी कृपा से तुम्हारी इच्छा पूर्ण हुई है, वरना हम किस योग्य हैं।''

हक़ हक़ हक़

जवाब

एक बार की बात है कि परम सुन्दरी आवास काशी (बनारस) में हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) मख़्दूम साबिर बनारसी रहमतुल्ला अलैह के पवित्र रौज़ा के भीतर बैठे हुए 'वहदत' (एकेश्वरवाद) के मद्यशाला के मद्यपान-कर्त्ताओं यानी शिष्यों, इरादत में पक्के शैदाइयों को आत्मज्ञान के पाठ का उपदेश दे रहे थे। इस वक़्त ज्ञान-सागर आवेश पर था। ईश-दर्शनार्थियों पर बेखूदी का आलम छाया हुआ था। हर आदमी मद्य-पान से मतवाला हो रहा था। सरापा अपने से बेख़बर था कि ऐसे वक्त कृपावान् के दरबार में एक पण्डित संस्कृत का प्रकाण्ड विद्वान, चार वेद और अठारह पुराण का प्रचण्ड महावेत्ता, वैद्यिकी और दर्शन-शास्त्र में दक्ष, अपने धर्म के समकालीनों में अलबेला और अनूठा बेखटक, बेझिझक और बेधड़क रौज़ा के भीतर चला आया और हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) के समक्ष दार्शनिक रूप से ईश्वर की एकेश्वरवादता में बैठकर प्रश्न करने लगा।

पण्डित जी की रौबदार बातों से किसी भी शिष्य को उसके प्रश्न के उत्तर देने का साहस न हो सका और हर एक-दूसरे के मुँह को हक्का-बक्का होकर ताकने लगे। चूँकि उस वक्त प्रेम- पाठशाला में नव-शिखवों के अतिरिक्त कोई दक्ष ख़लीफ़ा उस सभा में उपस्थित न था और आप (रंगीला पीर) भी

संयोग से उस घड़ी रौज़ा के बाहर टहल रहे थे। इस कारण आप (रंगीला पीर) की तरफ से भी प्रश्न का उत्तर देने में विलम्ब हुआ। पण्डित जी को जब अपने प्रश्न का उत्तर न मिल पाया, तो बहुत बौखला गए और हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) से कह पड़े–"ऐ मियाँ साहब! यदि आपके दिल के थैले में ज्ञान का नगद नहीं है, फिर क्यूँ अपना नाम महात्माओं (सूफियों) के सूची में अंकित कराया है?" हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) ने बहुत विनम्रता और सहनशीलता के साथ उत्तर दिया, "ऐ बाबा! ज्ञानियों के सिरमौर! मेरे पास ज्ञान-नगद को तू व्यर्थ तलाश करता है, क्योंकि यहाँ तो ज्ञान-नगद में से एक फूटी कौरी भी मेरे कोष में नहीं है, बल्कि इसको तो एक लम्बा समय गुजरा कि प्रेम के लुटेरे अपनी हाथ की चालाकी से पहले ही छीन-छान कर चम्पत हो गया। मैं तो अब बिल्कुल लुटा-घिसटा बैठा हूँ। लेकिन मुझे अपने नाम के प्रविष्ट का रंचमात्र भी ज्ञान नहीं है कि किसने महात्माओं की सूची में अंकित कर दिया है? ऐ महान! मैं तो बिल्कुल अयोग्य व्यक्ति हूँ, इसलिए मैं तुमसे यह आग्रह करता हूँ कि यदि किसी ने भूल से मेरा नाम संतों की दफ्तर में चढ़ा दिया है, तो तू मुझपर सिर्फ इतनी कृपा कर कि अभी जाकर उसके अन्दर से मेरा नाम हटाकर अपना नाम चढ़ा ले; क्योंकि परमेश्वर के ज्ञान-ध्यान में तू सिद्ध हो चुका है और हर ज्ञान में चतुर ज्ञात होता है।"

आप (रंगीला पीर) ये सारी बातें मक़बरा के बाहर खड़े होकर सुन रहे थे और मन-ही-मन गुस्सा हो रहे थे। यहाँ तक

कि रोष से आपका चेहरा लाल हो गया था; क्योंकि पण्डित जी के बेसिर पैर और उटपटांग बातों से आपको बहुत ही कष्ट हो रहा था।

''काश! हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) इस वक्त मुझको बुलवा लेते, तो क्या ही अच्छा होता !! फिर या तो पण्डित जी 'कलमा' पढ़ लेते या मैं ही उनके हाथ से अपने गले में 'जनैव' डलवा लेता, पर बिन आज्ञा कैसे जाऊँ? क्योंकि बिन बुलाए मार खाऊँ''

ईश्वर की ऐसी कृपा हुई कि हज़रत साहब(शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) ने स्वंय शिष्यों से दरयाफ़्त किया कि इस वक़्त सय्यद अमजद कहाँ हैं? सेवकों ने जवाब दिया-''या हज़रत! सय्यद साहब मकबरा के बाहर हैं।'' हज़रत साहब(शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) ने फरमाया- ''जाओ! फ़ौरन उसे यहाँ बुलाओ।'' सेवक हज़रत साहब की यह आज्ञा सुनते ही आपके पास दौड़े हुए आए और कहा-''सय्यद साहब! आपको हज़रत साहब बुला रहे हैं, फौरन चलिए, देर न कीजिए! बहुत देर से आपके प्रतीक्षक हैं।''

आप (रंगीला पीर) तो अपने बुलाने का पहले ही से इंतजार कर रहे थे। तत्काल ही आप उसके साथ मक़बरा के भीतर चले गए और हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) का चरण-स्पर्श कर चुप-चाप एक ओर बाअदब बैठ गए। हज़रत साहब(शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) ने कहा ''सय्यद! मेरे क़रीब आकर बैठो और पण्डित जी का प्रश्न सुनकर उन्हें उत्तर दो कि जिससे वह संतुष्ट हो जाएँ; क्योंकि वे बहुत देर से यहाँ पधारे

हुए हैं और अब बैठे-बैठे उकता गए हैं। इसके अतिरिक्त अपने प्रश्न का उत्तर न पाने से और भी दुःखी हो रहे हैं।''

आपने हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) के आदेशानुसार पण्डित जी की सेवा में सविनय अनुरोध किया-''ऐ जनाब! युग के ज्ञाता!! वह कौन सा असाध्य प्रश्न है? जिसके उत्तर के न पाने से आप इस प्रकार उद्विग्न हैं। जरा कष्ट सहकर उस प्रश्न को दोहराया जाए।'' पण्डित जी ने कहा-''क्या? आप उस प्रश्न को हल करेंगे।'' आपने पण्डित जी से कहा ''तौबा! तौबा कीजिए!! भला! मैं अज्ञानी कब आपके प्रश्न के उत्तर देने योग्य हूँ। मैंने, न शिक्षक का मुँह देखा और न किसी पुस्तक का एक अक्षर याद किया। मैं तो अनपढ़ ही माँ की कोख से जन्म लिया और अनपढ़ ही आजतक दुनिया में हूँ। चूँकि हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) का हुक्म है, इसलिए उसका मुझे पालन करना कर्तव्य है, वरन् मेरी क्या मजाल है, जो आपसे तर्क-वितर्क करने का वचन दे दूँ, किन्तु मैं आपके प्रश्न सुनने का अवश्य इच्छुक हूँ। पण्डित जी ने कहा मेरा प्रश्न है-''खुदा कुजास्त? व चेरा फ़क़ीर हमावुस्त मी गोयद?'' (अनुवादः- खुदा कहाँ है? और फकीर क्यूँ कहता है कि हर जगह वह विद्यमान है?)

आपने प्रश्न को सुनकर पण्डित जी से कहा-''वाह! जनाब, आपका प्रश्न तो कुछ भी अनोखा नहीं है। बस! आप इतनी छोटी सी बात पर इस प्रकार गर्वित हो रहे हैं और अपने इस अल्प बुद्धिमता पर इतने आग बबुला होकर सख्त और सुस्त कहकर फकीरों को सताते हैं। ऐसे प्रश्न का हल होना कौन

कठिन काम है। इसे तो 'क','ख','ग' जानने वाला एक बच्चा भी अच्छी तरह से हल करके समझा सकता है। अब ज्ञात हुआ कि इसी कारणवश सभा में उपस्थित किसी साहब ने आपके प्रश्न के उत्तर देने में अपनी तबीयत को प्रवृत्त नहीं किया। सत्य भी है कि ऐसी सहज बात बताने के लिए क्या मुँह खोलते, इसलिए मौन को ही वाक्-शक्ति पर श्रेष्ठता रखना बेहतर समझा और मौन ही हर प्रकार से इस दुनिया में अप्राप्य वस्तु है। इसी से मनुष्य दुनिया में प्रतिष्ठित रहता है और यही मनुष्य को बुलन्दी तक पहुँचाता है।

आपने फरमाया-''पण्डित जी! यदि आपको अपने प्रश्न के उत्तर पाने की इच्छा है, तो पहले आप मेरे प्रश्न के उत्तर देने की कृपा करें। तब आपके प्रश्न के उत्तर को भी दरम्यान में लाया जाएगा।'' पण्डित जी ने कहा-''बहुत अच्छा! कोई हर्ज नहीं है! पहले आपही मुझसे अपने प्रश्न का उत्तर ले लें। मुझको सहर्ष ये बात स्वीकार है। अब कहिए कि वह प्रश्न क्या है?'' आपने कहा मेरा प्रश्न है-''बू दर गुल, रंग दर हेना, मौज दर दरिया, जबद दर लबन, रूह दर जिस्म व रोग़न दर कुन्जद कुजास्त, यीं रा जवाब बगो'' (अनुवादः- फूल में महक, मेहदी में रंग, दरिया में लहर, दूध में मक्खन और तिल में तेल कहाँ है? इसका उत्तर दीजिए।)

पण्डित जी आपका यह प्रश्न सुन लज्जित होकर चिंताग्रस्त की सागर में देर तक डुबकी लगाए रहे, पर कुछ भी आशय हाथ न आया, अर्थात् उन चीजों का हरगिज निशान (लक्षण या चिह्न) उनके प्रकट-कर्त्ता (मज़हर) में न बता सके। जब आपने पण्डित जी को उत्तर देने में असमर्थ पाया, तब पण्डित जी की सेवा में अर्ज़ किया-''ऐ बुद्धिमान्! आप सदैव

फूल को सूंघते हैं, परन्तु उसकी महक को आँख से नहीं देखते; मेहदी का निरीक्षण करते हैं, पर उसके रंग से ख़बर नहीं रखते; मौजबीनी में रहते हैं, पर इसका निशान आप हरगिज दरिया में नहीं देख सकते हैं; दूध को सुबह-शाम पीते हैं, पर उसमें मक्खन आपको दिखाई नहीं देता, आत्मा शरीर में सदा चक्कर लगाती रहती है, पर आजतक आपने उसको न देखा। इसी प्रकार तिल का तेल रोजमर्रा सर पर अवश्य डालते हैं, पर तिल में तेल का पता हरगिज नहीं बता सकते। अब, पण्डित जी! जरा ग़ौर तो कीजिए कि बावजूदे इसके कि ये छवों, हर वक्त हमारे दृष्टि के समक्ष हैं, परन्तु फिर भी उसकी वास्तविकता से अनभिज्ञ हैं कि फूल में महक कहाँ है? मेहदी में रंग किस जगह है? दूध में मक्खन किस ओर है? दरिया में मौज किधर से उठती है? शरीर में आत्मा का किस अंग में निवास है? तिल में तेल कहाँ रहता है? फिर हम निराधार ज्ञानी, किस तरह उस सृष्टि-कर्त्ता का निशान बता सकते हैं और कैसे उसको दिखा सकते हैं? और क्या आप प्रश्न का उत्तर इस रूप में दे सकते हैं कि सभी हकीम और बुद्धिमान इस बात को अच्छी तरह जानते हैं कि आत्मा शरीर में हर वक्त भरा हुआ है और एक पल के लिए भी जुदा नहीं होती है, लेकिन आजतक किसी पर यह साबित और ज़ाहिर न हुआ कि आत्मा का वास्तविक ठिकाना कहाँ है? देखिए! कोई उसको दिल में ख्याल करता है, कोई उसको दिमाग़ में कल्पना करता है, कोई उसको जिगर में अनुमान लगाता है, लेकिन इनमें किसी एक का भी फैसला निश्चित न हो सका। इसी प्रकार जितने हकीम एवं विद्वान आत्मा की अनुसंधान में असमर्थ रहे, वैसे ही आप भी

आत्मा के ठहराव की जगह और इसके देखने से वंचित और अंजान हैं। जबकि आपका सृष्टि की चीजों का पता लगाने में यह दशा है, तो फिर वह ईश्वर जो सृष्टि का रचयिता है और संसार का स्वामी है। इस अल्पबुद्धिमता और अयोग्यता से कैसे उसकी झलक को देखने का सौभाग्य प्राप्त कर सकता है? अब इसको जानिये कि इस बात पर सभी लोगों का एक-मत है कि दूध जबतक जमाया नहीं जाएगा, दही नहीं बन सकता और दही जबतक महा नहीं जाएगा, तब तक उसके भीतर से मक्खन नहीं निकल सकता; तिल जबतक कोल्हू में पीसे न जाएंगे, तेल नहीं दे सकता; मेहदी जबतक सिल पर पीसी न जाएगी, कैसे वह रंग दे सकती है? इसी प्रकार मनुष्य ईश्वर की खोज में तत्पर और परेशान रहकर विनष्ट नहीं होगा और खुद को पूर्ण रूपेण 'नश्वर'' (फ़ना) के कोल्हू में पिस न जाएगा, वह कदापि ईश्वर को पा नहीं सकता।''

''पण्डित जी आँख जगत की सम्पूर्ण चीजों को देखती है, किन्तु कान, जो आँख से संलग्न है, उसके देखने से सदा वंचित ही रहती है। अब आप कहिए कि आँख, कान को दर्पण द्वारा देख सकती है, तो इसका उत्तर यह है कि मनुष्य भी गुरू के माध्यम से ईश्वर को देख सकता है।''

पण्डित जी जैसा कि मैंने उक्त बात में कही कि आँख कान को उसके बहुत करीब होते हुए भी नहीं देख सकती, वैसे ही ईश्वर मनुष्य के बहुत निकट-से-निकट है, परन्तु मनुष्य जगत् की सारी चीजों को देखता है, परन्तु ईश्वर के देखने से वंचित ही रहता है। अब इस तुच्छ का कहना यह है कि आप कभी ईश्वर

का दर्शन इन तर्क-वितर्कों के करने से कत्तई तौर से नहीं पा सकते हैं। इससे अच्छा तो यही है कि आज से ऐसे भाषण और बे-सूद बातों से फिरकर अपने को हर जगह से अलग-थलग करके किसी मंडप में बैठे रहिए और हरि के नाम भजते रहिए, क्योंकि वही नाम आपके लिए लाभदायक होगा और पण्डित जी जो फ़क़ीर बाहक़ हमावुस्त (सब कुछ खुदा है) का नारा मारते हैं, वह 'हमावुस्त' ब्रह्मात्मा के सगुण को कहते हैं और यह सगुण जिसका कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में प्रदर्शनी है, ठीक उसी निगुण का नूर है, जिसके आप खोज-कर्त्ता हैं। अब आप फूल, मेहदी, दरिया, दूध, शरीर और तिल को सगुण समझिये एवं गंध (महक), रंग, मौज, मक्खन, आत्मा और तेल को ठीक निगुण की कोटि में जानिए, इसलिए कि यह छवों सदा अपने को गुप्त रखते हैं; लेकिन जिस वक्त रंग, मक्खन और तेल अपने प्रकट-कर्त्ता से बाहर आ जाएंगे उसी रूप में प्रत्येक तीन तत्काल ही सगुण के रूप में आ जाएंगे और निगुण की कोटि से उसी समय गिर पड़ेंगे, क्योंकि निगुण सदैव अपने को गुप्त रखता है, परन्तु गंध, मौज और आत्मा सदैव निगुण की अवस्था में रहते हैं और ये कभी सगुण की कोटि में नहीं आ सकते। अब जो पहचान-कर्त्ता इन तीनों की पहचान कर लेगा, वह ईश्वर को पहचानने वाला निस्संदेह हो सकता है; क्योंकि रंग मक्खन और तेल को निकाल लेना तो सहज-से-सहज है, परन्तु गंध, मौज और आत्मा को फूल, दरिया और शरीर से पृथक करके देखना कठिन-से-कठिन है। लेकिन खोज-कर्त्ता को गंध, मौज और आत्मा की चक्कर में पड़ना व्यर्थ है और अपने को परिशानी में

डालना है; क्योंकि गंध और आत्मा की पहुँच में पहचान-कर्त्ता व्योम की कोटि में रहेगा और मौज की पहुँच में पहचान-कर्त्ता नीर की कोटि पर रह जाएगा; किन्तु स्वंय के पृथक्ता में ज्योतियता '(नूरीयत) में पहुँचेगा और ज्योतियता ठीक निगुण है और निगुण में जाना उसमें फ़ना होना है और उसमें फ़ना होना यानी फ़नाफ़िल्लाह होना बक़ाबिल्लाह होना है और जब पहचान-कर्त्ता बक़ाबिल्लाह में रहेगा, फिर बक़ा- बिल्लाह ही की कोटि में सदैव सफलता है।

पण्डित जी आपकी बातें सुनते ही चकरा गये और उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। क्षण-भर में ही उनका फौकना बन्द हो गया और उनकी सारी गरमजोशी तत्काल ही ठण्डी पड़ गयी। हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) ने पण्डित जी से कहा-''सैयद के प्रश्न का उत्तर क्यों नहीं देते? मौन मूरत की भाँति क्यों बैठे हो? क्या सकते में आ गए हो? जरा उत्तेजित तो होवो!'' पण्डित जी ने अपनी चमकीली जबान को खोलकर कहा- ''निस्संदेह हाजी साहब (हज़रत ख़्वाजा कुतुब अली नन्दानवी बनारसी) सिद्ध फ़क़ीर हैं। सत्य है कि ईश्वर का पहचान कराने वाले ज्ञान के ख़ज़ाना फ़क़ीर ही होते हैं। हम दुर्भाग्यशाली इस ज्ञान से वंचित हैं। अब अनुरोध ये है कि आप की प्रतिष्ठा में जो कुछ मुझ अशिष्ट से अशिष्टता हुई है, उसे क्षमा करने की कृपा प्रदान की जाए और अपने फ़ैज़े रूहानी से मुझे ईश्वर के रहस्य से बाख़बर करने का सौभाग्य प्राप्त कराया जाए।'' हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) ने कहा कि आप तो स्वंय समझदार और योग्य व्यक्ति हैं। हर ज्ञान और

कला में निपुर्ण हैं। भला! मैं अज्ञानी, नासमझ और बुद्धिहीन ईश्वर का पहचान कराना क्या जानूँ? अब, ज़रा इस बात को तो विचार कीजिए कि मुझ जैसा नादान कब आप जैसे बुद्धिमान को किसी कार्य की शिक्षा दे सकता है। मैं तो बिल्कुल इस ज्ञान की शिक्षा देने योग्य नहीं हूँ। आपने जो कुछ मेरे सम्बंध में कहा है, वह आपके विचार की श्रेष्ठता का फल है। यदि आपको प्रेम-पुस्तक की शिक्षा लेना स्वीकार है, तो आप निस्संदेह सैयद से ही कहें, निस्संदेह वही प्रेम शिक्षा को भली-भाँति पढ़ा सकते हैं,क्योंकि इस विषय की शिक्षा देने की योग्यता ईश्वर ने उन्हें ही प्रदान की है।

पण्डित जी आपकी ओर मुख़ातिब हुए, तो आपने उनसे कहा–''ऐ जनाब! हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) तो मेरे मार्ग-दर्शक हैं, फिर राजा भोज और कहाँ गंगू-तेली मैं तो आपकी जूतियाँ ढ़ोने योग्य भी नहीं हूँ, फिर मेरे पास इल्मे मारफ़त (ईश्वर के पास पहुँचने वाला ज्ञान अर्थात् माध्यम का ज्ञान) कहाँ है? आप अपनी इच्छा हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) से ही जाहिर करें।'' यह कहकर आप (रंगीला पीर) खामोश हो गए। तत्पश्चात् हज़रत साहब ने कहा- ''पण्डित जी जो पूछना चाहते हैं, उनको बता दो, अब यहाँ से वंचित होकर न भेजो क्योंकि किसी को उदास करना अच्छी बात नहीं है।''

अब आपने हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) के आदेशानुसार पण्डित जी से कहा-''पहले आप ये बतावें कि ईश्वर का पता मुझ से चेला बनकर पूछना चाहते हैं या गुरू बनकर।'' पण्डित जी आपकी इस बात पर बहुत चिंता में

पड़ गए; किन्तु इस चिंता का कारण इसके अतिरिक्त कुछ और ज़ाहिर न हुआ कि उन्होंने अपने मन में यह विचार किया हो कि यदि मैं गुरू बनता हूँ, तो यहाँ सभा में उपस्थित लोग अपनी नजर में मुझको बदनाम करेंगे और मेरी खिल्ली उड़ाएंगे और कहेंगे कि वाह! ये कैसे गुरू हैं, जो अपने चेला से ईश्वर का निशान पूछते हैं और यदि चेला बनता हूँ, तो मुझको अपने धार्मिक भाईयों में लज्जित होना पड़ेगा, फिर सभी मुझसे फिर जाएँगे और फिर प्रतिष्ठा में कमी आने से उनके आय में भी घाटा पड़ जाएगा। बहुत देर के बाद पण्डित जी ने खूब सोच समझ कर आम सभा में पुकार कर कह दिया कि ''ऐ साहबो! आज से मैं सैयद साहब का चेला बनता हूँ।'' पण्डित जी के कहने के पश्चात् हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) ने कहा कि-''ऐ सैयद! अब देर न करो, जल्द ही उनको विदा करो और जो कुछ बताना हो, बता दो, क्योंकि जब ये चेला ही हो गए, तो फिर कौन सा बहाना रहा। अब इनको अपना प्रिय समझो ।''

हज़रत साहब (शाह हाजी कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) के कहने के बाद आपने पण्डित जी से कहा–''अब मेरे क़रीब आइए! यद्यपि मुझमें चेला बनाने की योग्यता नहीं है, किन्तु हज़रत साहब के फ़ैज़ का ख़जाना विस्तृत है। ऐसा हो सकता है कि आपको भी उसके भीतर से कुछ अंश प्रदान की जाए।'' पण्डित जी आपके कहते ही करीब आकर बैठ गए। आपने सर्वप्रथम उनको ''अस्तग़फार''पढ़ाई और तीन बार ''तौबा'' कराकर ''इकरारे रिसालत''लेकर कलम-ए-आजम की शिक्षा दे दी। तत्पश्चात् आप (रंगीला पीर) हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन

नन्दानवी बनारसी) की ओर मुँह करके बैठ गए और ईश्वर की कृपा के अवतरित होने के प्रतीक्षक हुए कि अचानक पण्डित जी मस्तों की तरह झूमने लगे।

पण्डित जी ने उसी वक़्त से अपनी दशा और दिशा बदल ली। मित्र मंडली से अपना संबन्ध तोड़ लिया और परायों से मुँह मोड़कर ईश्वरीय प्रेम के नशे में बावला होकर गंगा तट पर अपना आसन जमा लिया। शहर में आना जाना पूर्णतः त्याग दिया और ईश प्रेमी बनकर आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करने लगे।

——

हक़ हक़ हक़

क़ुतबुद्दीन

एक दिन हज़रत साहब(शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) अपने शिष्यों के साथ कश्ती द्वारा मिर्जापुर जा रहे थे । जिस समय कश्ती चुनारगढ़ के किला के नीचे पहुँची क्योंकि यहाँ एक बहुत ही गहरा कुण्ड (जलाशय) है, जब कोई कश्ती इस कुण्ड में पड़ जाती है, तो पहाड़ से टकराने के कारण तुरन्त उसमें डूब जाती है। संयोग से यह कश्ती भी उसी कुण्ड में जा फंसी। सभी शिष्य अचानक ये संदिग्ध स्थिति देखकर कश्ती में घबरा गए और सभी को अपने डूब जाने का अन्देशा हुआ। इस निराशास्वस्था में आप (रंगीला पीर) की जिह्वा से अनायास यह दोहा निकल पड़ाः

ख्वाजा मोरी नइया लगा दी जो पार ।
बही जात है और तुम हो जग करतार ॥

आपका ऐसे नाजुक घड़ी में विनति करना ईश्वर को स्वीकार हो गया। तुरन्त ग़ैब से सहायक आ पहुँचा। शीघ्र ही पवन का एक ऐसा तेज झोंका आया कि कश्ती तत्काल ही इस कुण्ड से दूर जा निकली और कश्ती के निकलते ही सभी शिष्यों का चेहरा खुशी से खिल उठा। हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) ने आप (रंगीला पीर) की तरफ देखा और फरमाया-''वाह सय्यद! तुमने तो इस घड़ी खूब ही मदद मंगवाई, नहीं तो तुम्हारे गुरूभाईयों को निःसंदेह यह विश्वास हो गया था कि अब हम सब-के-सब इस कुण्ड में डूब जाएँगे। आपने हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) से अर्ज किया- ''ऐ

रक्षक! जब स्वंय गुरू की ज़ात उपस्थित थी, फिर किस प्रकार कश्ती डूब सकती थी और ये सब सहायता तो आप की तरफ से ही जाहिर हुआ है और वास्तविक रूप में इन शिष्यों के तो आपही ख्वाजा हैं। मेरा दोहा पढ़ना सिर्फ बहाना हो गया।'' हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) आपका ये जवाब पाकर बहुत खुश हुए और कश्ती दो दिन में खैरियत के साथ मिर्जापुर पहुँच गयी और किसी प्रकार की कठिनाई रास्ता में किसी साहब को भी न हुई। इल्तेफ़ातुल औलिया सैयद इल्तेफ़ात अहमद अमजदी (नौशा मियाँ) बहुत खूब समझते हैं :

बीच में नइया, चारों ओर मझधार है।
तुम ही रंगीला, मेरा खेवनहार है।।

———

हक़ हक़ हक़

असर

एक बार हज़रत साहब(शाह हाजी कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) ने आपको जिला आजमगढ़ के नन्दाना ग्राम में एक मस्जिद, जिसे 'मस्जिदे शाह' के नाम से जाना जाता है, के मरम्मत करवाने हेतु भेजा। जब आप (रंगीला पीर)नन्दाना पहुँचे, तो उसके दूसरे दिन से मस्जिद के मरम्मत का काम मजदूरों के जरिए प्रारम्भ करवा दिया और जहाँ-जहाँ पलस्तर गिर गया था, वहाँ-वहाँ पलस्तर दोबारा करवाया। इस तरह सात-आठ दिन में सारा काम खत्म हो गया।

इस मस्जिद में शाह निसार साहब बतौर इमामे मस्जिद रहा करते थे। इस मस्जिद के भीतर हज़रत बाबा फरीद रहमतुल्लाह अलैह के कमर में बाँधने वाली एक जंजीर लटकी हुई है और साथ ही काबा के पत्थर का एक टुकड़ा भी मौजूद है, जिसका प्रत्येक वर्ष में एक बार दर्शन कराया जाता है। एक बार आप (रंगीला पीर) अनजाने में उस काबा के पत्थर पर जा बैठे। शाह निसार साहब आपके बैठते ही मारे क्रोध के अपने जामे से बाहर हो गये और आवेश से आँखे निकाल कर डपट्ने लगे-''सैयद! (रंगीला पीर)तुम क्यों इस पत्थर पर बैठ गये? यह तो बहुत ही पवित्र चीज है और प्रतिष्ठा-योग्य है! इस पर तुम्हारा बैठना उचित नहीं है।''

आपने इमाम साहब (शाह निसार साहब) को जवाब दिया-''जिसके घर का यह पत्थर है, वह स्वंय उपस्थित है और

यह उसी उपस्थित की ही सम्पत्ति है और यह सम्पत्ति उसने संसार में किसी एक के हिस्सा में नहीं प्रदान किया है। अब यदि आप मुद्दई बनते हैं, तो आधा पत्थर तोड़ के मुझे दीजिए और आधा पत्थर अपने खाने-कमाने के लिए रख लीजिए एवम् आधा पर मेरा अपना अधिकार है, चाहे उसका दर्शन कराऊँ, चाहे जिसका पत्थर है, उसी को उसपर बैठाऊँ। आप मेरे हिस्से के भीतर बाधक नहीं बन सकते हैं।'' इमाम साहब (शाह निसार साहब) आपकी हाज़िर जवाबी पर बहुत नाराज हुए और बिगड़कर कहने लगे-''सैयद! जिस समय हाजी साहब (हजरत ख्वाजा कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी रह०अ०) यहाँ पधारेंगे फिर मैं तुम्हारी ढ़िठाई और अशिष्टता की शिकायत करूँगा और क़ाफ़िला से दूर निकलवाकर फेकवा दूँगा।'' आपने उनकी अनुपयुक्त बात का ये जवाब दिया-''हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) के यहाँ विराजमान होने के पूर्व आप स्वंय ही यहाँ से चले जाएँगे, फिर शिकायत किसका कीजिएगा? पहले तो आप अपने रहने की फिक्र कीजिए।''

आप (रंगीला पीर) ये बातें कहकर मस्जिद से कूच कर गए और दूसरे दिन हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) की सेवा में बनारस चले आए। लेकिन शाह निसार साहब के शिकायत करने का खटका लगा रहा और दिल में यह धुकधुकी लगी रही कि जिस समय हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) मस्जिद का निरीक्षण करने के लिए जाएँगे तो इमाम साहब (शाह निसार साहब) अवश्य हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) से शिकायत करेंगे, क्योंकि उनको

शिकायत करने की आदत भी है। इसके अतिरिक्त हज़रत साहब (शाह हाजी कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) को उनका बात रखना अस्वीकार नही है। फिर नहीं मालूम कि शिकायत करने के समय हज़रत साहब मेरे लिए कौन से दण्ड का निर्णय लेंगे।

आप (रंगीला पीर)इसी फिक्र में दिन-रात डूबे रहते थे, लेकिन किसी पर आप अपने भेद को ज़ाहिर नहीं करते थे कि शायद इसकी खनक हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) के कानों में न पहुँच जाए। हजरत साहब पन्द्रह दिनों के बाद मस्जिद देखने के लिए प्रस्थान किये। क़ाफ़िला में इनके सभी शिष्य साथ थे। चूंकि सवारी घोड़े की थी, इसलिए हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) मस्जिद में विराजमान हो गए और घोड़े से उतरते ही सर्वप्रथम शाह निसार साहब के ही विषय में पूछ-ताछ किया। ज्ञात हुआ कि उनको सोलह दिन हुआ कि इस संसार से सदा के लिए विदा हो गए हैं। एक स्थानीय व्यक्ति ने हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) से कहा-''ऐ हज़रत! जिस दिन सैयद साहब और निसार साहब से झिड़क हुई थी, वह उसी संध्या को विदा हुए।'' हज़रत साहब को यह सुनकर बहुत दुःख हुआ और आपसे नोक झोंक होने का कारण पूछा, तो आपने फरमाया- ''अप्रसन्नता की कोई बात नहीं हुई थी, सिर्फ़ मैं काबा के पत्थर पर भूल से बैठ गया था। शाह निसार साहब को मेरा यहाँ बैठ जाना अखर गया। मैंने उनसे कहा कि शाह निसार साहब काबा सिर्फ आपकी बपौती नहीं है। इसमें तो सबका हिस्सा है। अब ये पत्थर आधा मुझे दीजिए और आधा आप लीजिए। शाह निसार साहब मेरे इस कहने पर आग-बगोला

होकर कहने लगे-'सैयद तुम्हारी निंदा हाजी साहब से करेंगे और तुम्हें अपमानित कराकर क़ाफ़िला से निकलवा देंगे।' तब मैंने भी कह दिया- ''आप हज़रत साहब (शाह कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) के विराजमान होने तक दुनिया ही में न रहेंगे। फिर मुझको तो आप कब क़ाफ़िला से निकलवा सकते हैं।'' आपके इस कहने पर हज़रत साहब (शाह हाजी कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी)ने फ़रमाया-''ऐ सैयद! अब ज़ाहिर हुआ कि श्री स्वर्गीय को तुमने ही मस्जिद से निकाला है, यदि वह न मरते, तो फिर तुम्हारा कहना भला कैसे सच होता।'' आप (रंगीला पीर) हज़रत साहब (शाह हाजी कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) के इस फ़रमान को ख़ामोश होकर शीश नवाए सुनते रहे और मन-ही-मन कहते जाते-''वाह क्या खूब! जनाब मरहूम का तो समय ही अन्तिम हो चला था, मेरा कहना हज़रत साहब (शाह हाजी कुतबुद्दीन नन्दानवी बनारसी) ने व्यर्थ में पकड़ ली है, लेकिन वह स्वामी हैं, जो कह रहे हैं, यथार्थ है। आज्ञाकारी को स्वीकारने के अतिरिक्त क्या चारा है।''

——

रंग श्याम

हज़रत सैयद शाह तसद्दुक़ अली (सुल्तान असद/शेर शाह/ तेज़ रफ़्तार/पर वाले शाह साहब) की हालाते ज़िन्दगी

हक़ हक़ हक़

मेरठ से सिवान तक

उत्तर प्रदेश जिला मेरठ इन्दरकोट सय्यद वाड़ा में एक बृहद परिवार निवास करता था, जिसमें सदस्यों की कुल संख्या पाँच सौ के बराबर थी और इनके रहने हेतु बड़ी-बड़ी भव्य हवेलियाँ बनी हुई थीं, जो अबतक लगभग उसी रूप में विद्यमान है। इस घर में घरेलू कार्य करने के लिए अधिक संख्या में रसोईयाँ और सेवकों की व्यवस्था थी। इस परिवार का वंशीय व्यवसाय हिकमत (चिकित्सा) था। इनके पूर्वज अफ़ग़ानिस्तान के रहने वाले थे। इनकी वंशावली 35वीं पीढ़ी में छठवें इमाम हजरत इमाम जाफर सादिक रजिअल्लाहो अन्हो से जाकर मिलती है। स्थितियाँ कुछ ऐसी उत्पन्न हुई कि उनका भारतवर्ष में हज़रत सुल्तान महमूद गज़नवी की फौज के साथ आगमन हुआ, क्योंकि सदस्यों की संख्या अधिक थी, इसलिए ये तीन अलग-अलग स्थानों पर बसे। कुछ सदस्य रावलपिण्डी में ठहरे, कुछ सदस्य मऊशम्साबाद में टिकें और शेष सदस्यों ने मेरठ में निवास ग्रहण किया।

मेरठ इन्दरकोट को, जब इस वंश के सदस्यों ने निवास-स्थान बनाया, तो एक नये मुहल्ला ''सय्यद-वाड़ा'' के नाम से विख्यात हुआ। क्योंकि ये सय्यद वंशीय थे। यह परिवार मेरठ में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता था और प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखा जाता था, क्योंकि इस घर में एक-से-एक विद्वान और बड़े बड़े हकीम पैदा हुए थे, जो 'हकीमे शहर' कहलाते थे। घर में हर तरह से खुशहाली थी। सन् 1272 हिजरी (1855 ई0) में हकीम

सैयद बरकत अली के घर सैयद तसहुक़ अली नामक एक विभूति का शुभागमन हुआ। पूर्व ही से शिक्षा-दीक्षा का वातावरण उपस्थित था। आपकी बड़ी बहन अरबी और फारसी भाषा की विदुषी एवम् धार्मिक ज्ञान से भली-भाँति परिचित थीं। इन्होंने फारसी भाषा अपने पिता सय्यद हकीम बरकत अली से और अरबी भाषा मौलवी अब्दुलकादिर पानीपती रह०अ० से ग्रहण की थीं। इनको फारसी भाषा के दो विख्यात कवियों 'हाफिज' तथा 'साएब' के पद्य-संग्रह पूर्णतः कंठस्थ थे। ये ऐसी प्रतिभा-शालिनी थीं कि इन दोनों कवियों के पद्यों के जटिल अंशों के अर्थ को सहजतापूर्वक हल कर दिया करती थीं कि श्रोता-गण अवाक् एवम् अचंभित रह जाते थे। इनकी वाणी तथा लेखनी दोनों ओजपूर्ण एवम् तेजस्वी थीं। ईश्वर ने इन्हें ऐसा प्रियदर्शी एवम् सदाचारिता प्रदान किया था कि सभी मित्र, सम्बंधी एवम् पड़ोसी इनकी मधुर वाणी पर मोहित रहा करते थे। किसी भी व्यक्ति को उनके प्रति निंदा भाव प्रदर्शित करने का अवसर ही दुर्लभ था।

रावलपिण्डी के एक क़ादरिया शाखा के प्रसिद्ध परम् सिद्ध महात्मा हज़रत चमन शाह कादरी रह०अ० से इन्होंने आध्यात्मिक शिष्यता प्राप्त की थी। निशदिन आराधना एवम् तपस्या में अपनी जीवन व्यतीत करती थीं, गुरू से अगाध एवम् असीम श्रद्धा रखती थीं, सदासर्वदा गुरू-नाम उनकी जिह्वा पर ओत-प्रोत रहता था । जीवन का कोई भी श्वास प्रति श्वास गुरू-स्मरण से वंचित एवम् पृथक न था ।

सैयद तसहुक़ अली असद पर वाले शाह साहब ने अपनी शिक्षा केवल अपनी बड़ी बहन से ही ग्रहण किया था। आपकी स्मरण-शाक्ति इतनी तीव्र एवं प्रखर थी कि अभी बालक ही थे

कि कई भाषाओं में दक्षता प्राप्त कर चुके थे तथा अस्वस्थ व्यक्तियों के चिकित्सा और सेवा शुश्रूषा करने में अभिरूचि लेने लगे थे।

जब आप (सैयद तसद्दुक़ अली असद पर वाले शाह साहब) यौनावस्था की ओर उन्मुख हुए, तो आपके हृदय की विचित्र गति होने लगी एवम् ईश-दर्शन की अभिलाषा जागृत हुई। इसी अवस्था में आप रात्रि-समय अपनी कोठरी से सभी सदस्यों के सो जाने के पश्चात् 'अबू का नाला' (एक स्थान का नाम) की ओर चले जाते और वहाँ ध्यानावस्थित हो जाते, फिर ध्यान मग्नता से मुक्ति पाने के बाद अपनी कोठरी में वापस आ जाया करते थे। आपके माता को यह बात विदित थी कि उनका पुत्र रात को कहीं चला जाता है और फिर किसी समय रात में ही आ जाया करता है, लेकिन वे कुछ बोलती न थीं। आपके पिता ने एक रात्रि को, अपनी पत्नी पर संदेह करते हुए कहा- ''तुमने अपने लड़के को ख़राब कर डाला है, देखो, वह रात्रि-समय प्रति-दिन न जाने कहाँ चला जाता है? और फिर आ जाता है और तुम उसकी प्रतीक्षा करती रहती हो और उसके आने पर दरवाजा की जंजीर खोल देती हो कि वह भीतर प्रवेश कर जाए। आज रात्रि-काल मैं एक मोटा डण्डा साथ लिये सोता हूँ कि ज्योंही जंजीर खोलने के लिए खटखटाएगा, मैं उसकी हजामत बना डालूंगा कि उसकी सब शरारत जाती रहेगी।'' किन्तु देखने में यह आया कि आपके पिता सोए ही रह गये और दरवाजा स्वतः खुल गया और आप कोठरी में प्रवेश कर गए। प्रातः काल जब आपके पिता ने यह दृश्य देखा, तो उनकी सब गरमजोशी जाती रही और मौन धारण कर लेना उचित समझा। सन् 1294 हिजरी में पिता के

निधन के पश्चात् आपकी बड़ी बहन ने स्थिति-अनुसार आपको रावलपिण्डी में अपने गुरू महाराज हज़रत चमन शाह कादरी रावल पिण्डवी रह०अ० से शिष्यता प्रदान करा दी। तत्पश्चात् आपने वहीं कादरी शाह साहब की सेवा में रहना प्रारम्भ कर दिया। आपको शाह साहब की सेवा में रहते हुए बारह वर्ष गुजर गए, परन्तु अब तक आपको अभीष्ट ज्ञान-तृष्णा की तृप्ति न हो सकी थी, जिसके कारण उद्वेग एवम् अशांति की चंचल हिलोरें आपके हृदय-सागर में उठे ज्वार की तरह उफनती जा रही थी। इसके साथ-ही-साथ आपके गुरू महाराज को भी चिंता सता रही थी कि इसके ज्ञान-प्राप्ति में कौन सी बाधा आड़े आ रही है, जबकि इसने मेरी सेवा में कोई भी कमी शेष न रखी है।

सैयद तसद्दुक़ अली असद पर वाले शाह साहब इसी बेचैनी की हालत में एक रात्रि को निद्रावस्था में दो स्वप्न देखे, जिसने आपके ज्ञान प्राप्त होने की दिशा निर्णीत कर दीः

नहर के दोनों किनारों पर हरियाली लहरहा रही थी और उस हरियाली पर दो परम पवित्र ज्ञानी महात्माओं की प्रकाशमान् स्वरूपें शोभा लिए विराजमान थीं। इस समय एक महात्मा ने, जो दाँयी ओर बैठे थे, आपकी ओर इशारा करते हुए बाँयी ओर वाले से कहा- ''ये युवक जो आपके समीप खड़ा है, उसे हमें सौप दें, क्योंकि इसकी शिक्षा हमारे शाखा के शैख़ (दीक्षिक) से होगी'' बाँयी ओर वाले महात्मा ने उत्तर दिया- ''बहुत अच्छा हम प्रसन्नतापूर्वक इस युवक को आपकी सेवा में दे दिये, जिससे यह आपकी शाखा में दीक्षा पाये। हमें यह सहर्ष स्वीकार है।'' इसके बाद आपके हाथ को पकड़कर इच्छुक महात्मा के हाथ में थमा दिया। तभी आपकी नींद टूट गयी। कुछ देर बाद आपकी आँखें

फिर झपक गयीं और इस स्थिति में यह दृश्य देखा कि एक भव्य सुसज्जित महल में परमपद सिद्ध साधक, संतो महात्माओं का सभा आहुत है और मद्यपान का चक्र चल रहा है। जब मद्य-दाता ने सभी को क्रम से मध-पात्र वितरित करते हुए, आपको भी मद्य-पात्र देना चाहा, तभी सभा में उपस्थित किसी सममतावलम्बी ने उससे मद्य-पात्र हस्तगत कर लिया और कहा, ''इनका हिस्सा इस सभा में नहीं है।'' उसका यह कथन कहते ही आपकी आँखें खुल गयीं।

प्रातः होने पर आपने हज़रत चमन शाह कादरी की बारगाह में उपस्थित होकर ये दोनों स्वप्नों का उल्लेख किया, तो उन्होंने दोनो स्वप्नों को ध्यान से सुनकर उनके ताबीर को यों बयान किया:

''वह दो महात्माओं में एक हज़रत अब्दुलक़ादिर जिलानी रह०अ० (गौस पाक) और दूसरे हज़रत ख़्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती अजमेरी रह०अ० (ग़रीब नवाज) हैं। हज़रत गौस पाक ने ख्वाजा गरीब नवाज को सौंप दिया और वह सभा महात्माओं और संतो की क़ादरीया शाखा की थी। [सूफ़ी-मत में दो शाखाएँ बहुचर्चित हैं: (1)चिश्तिया शाखा और (2) क़ादरिया शाखा, चिश्तिया शाखा ख्वाजा गरीब नवाज से सम्बंधित है जबकि क़ादरिया हजरत अब्दुल क़ादिर जिलानी से।] इसी कारणवश इस सभा में तुम्हे हिस्सा नहीं मिला, अब यदि ईश्वर ने चाहा, तो बहुत ही जल्दी तुमको चिश्तिया शाखा के किसी परम ज्ञानी महात्मा से फ़ैज़ प्राप्त होगा, इसलिए अब तुम्हें आदेश होता है कि तुम पंजाब (रावलपिण्डी) से बिहार (जो उस समय बंगाल प्रोविंस का हिस्सा था) की ओर जाने के लिए तत्पर हो जाओ।

आपकी बहन साहिबा ने आपकी आवेगता को भाँपते हुए पूछा- ''ऐ भाई! क्या कारण है कि तुम सबेरे से इस प्रकार उद्विग्न हो रहे हो और कौन-सा शोक तुमसे सम्बद्ध है, जिसके चलते न किसी से बोलते हो, न खाते हो न पीते हो और न अपनी हालत का मुझसे ज़िक्र करते हो? अब ज़रा ये तो कहो कि क्या ख़ैरियत तो है!'' आपने इस वक्त उनकी बातों का कुछ भी जवाब न दिया। बहन साहिबा के बहुत आग्रह करने पर आपने अपनी वास्तविकता को जाहिर कर दिया। बहन साहिबा ने यह सब कैफीयत सुनकर आपसे फरमाया- ''ऐ भाई! तुम बड़े भाग्यशाली मालूम होते हो कि ख्वाजा ग़रीब नवाज ने तुम्हें हार्दिक इच्छा से अपनी सेवा में गौस पाक से मांग लिया है। अब ईश्वर पर धैर्य रखो, वह एक दिन अवश्य अपनी कृपा से तुम्हारी मनोकामना को स्वीकार कर निस्संदेह कादरी शाह साहब के कथन की सत्यता को प्रमाणित करेगा। अब तुम संतोषी होकर ईश्वर की कृपा के प्रतीक्षक रहो और मैं भी तुम्हारे लक्ष्य की प्राप्ति के लिए ईश्वर की बारगाह में प्रार्थिनी हूँ।''

एक दिन रावलपिण्डी में आपकी बहन साहिबा ने प्रातः काल बृहस्पतिवार के दिन आपसे फ़रमाया- ''ऐ भाई! आज का नाश्ता मेरे हाथ से खा लो। ये मेरी अंतिम सेवा है, क्योंकि रात्रि को तो मैं तुमसे वियोग कर जाऊँगी, परन्तु सावधान मेरी जनाज़ा पर आँसू न बहाना। हृदय को नियंत्रित रखना।'' आप (सैयद तसद्दुक़ अली असद पर वाले शाह साहब) यह सुनकर सहसा चौंक उठे और भौंचक्कों की तरह उनके आभामथी चेहरे को ताकने लगे। जब आपके होश-व-हवास दुरूस्त हुए। तब अपने आँखों में आँसू भर कर कहा,'' ऐ प्यारी आपा! ये क्या प्रलयकारी

दुर्घटना की सूचना दे रही हैं।'' आपकी बहन ने आपको अचरज और आकुल पाकर इस प्रकार अपने कथित वचनों को नया मोड़ प्रदान किया कि आपके हृदय पर इसका रंचमात्र भी प्रभाव न रहा। सारांश ये कि वह समय बीत गया। जब उपद्रव ग्रस्त संध्या-वेला आई, तो बहन साहिबा ने मग़रिब की नमाज़ अदा की और वज़ीफ़ा से विमुक्त हुईं। तत्पश्चात् पलंग पर जाकर विश्राम हेतु लेट गयीं। कुछ देर बाद चादर ओढ़कर बोलीं, ''ऐ मित्रों संसार से अंतिम यात्रा के प्रस्थान के लिए तत्पर हूँ।'' केवल इतना कहकर कलम-ए-तय्यबा ''लाएलाह इल्लल्लाह मोहम्मदुर्रसूलुल्लाह'' पढ़ा और प्रभात दीपक की तरह मौन धारण कर लिया। इन्ना लिल्लाहे व इन्ना एलैहेराजेऊन!

तत्क्षण ही जीवन-उद्यान को काल की अंधड़ ने सुखा डाला, घर में हलचल और हाहाकार मच गया, हर तरफ से रोने-पीटने तथा चीखने-चिल्लाने की आवाज़ें गूँजने लगीं अर्थात् महाप्रलय का दृश्य आ उपस्थित हुआ, घर के दर-व-दीवार पर उदासियाँ छा गयीं, पुष्प की कलियाँ मुरझा गयीं, वे पक्षियाँ, जो मुक्त गगन में चहक रही थीं, अचानक उनका चहचहाना बंद हो गया, उमड़ते उम्मीदों पर बिजलियाँ गिर पड़ीं, खलीहानों को दीमक चट कर डालें, शांति को प्रेत ले उड़े। अभिप्राय ये कि ज्योंहि घर के लोगों के विलाप को आपने सुना, त्योंही दौड़कर घर में गये और पलंग के समीप जाकर चादर को उठाकर प्रकाशयुक्त रूपवती मुखड़ा देखा, तो उनका अंत हो चला था। अब आपके इस घड़ी का शोक वर्णित करने योग्य नहीं, यद्यपि आपका हृदय-दर्पण पाषाण-वेदना से चूर-चूर था और जिगर पीड़ारूपी नश्तर से खण्ड-खण्ड हुआ जाता था, लेकिन स्वर्गीया की

वसीयत के मुताबिक आपने एक भी आँसू अपनी आँखों से टपकने न दिया।

तड़के शैख़ मन्नू खाँ चौधरी (रिजमेंट बाजार), जिनके देख-रेख में आप रहा करते थे, ने आकर कहा- ''ऐ सैयद तसद्दुक़ अली! मैं तुम्हारे बहन का कफन-दफन करूँगा, तुम इसकी चिंता न करना।'' परन्तु आपसे उनके कहने का कारण यह था कि आपकी स्वर्गीय बहन साहिबा उनके बेटियों की शिक्षिका थीं। 'कुरान-पाक' और इसके अतिरिक्त धर्माचरण की कुछ प्रारम्भिक बातें याद कराई थीं। आपने समयानुसार चौधरी साहब की बात को स्वीकार कर लिया, जिसके कारण उनके हृदय को ठेस न पहुँचे। चौधरी साहब ने आपकी स्वीकृति पर कफन-दफन की सामग्री तुरंत तैयार कराई और दफनाने के पूर्व पचास मन अनाज और इसके अलावे कुछ नगद भी दान स्वरूप वितरित किये। तत्पश्चात् दोपहर के समय ताबूत उठाकर कब्रिस्तान की ओर करूणामय प्रस्थान किया गया। इस वक़्त जनाज़ा पर एक अजब-तरह का शोक और बाध्यता प्रदर्शित हो रही थी। विवशता गिरेबान को चाक किये हुए सहचरी कर रही थी। दुर्भाग्यता बिलकती हुई आगे चली जा रही थी।

जन-समूह इतना था कि बहुत कठिनाईयों के साथ जनाज़ा क़ब्रिस्तान तक पहुँचा, परन्तु वहाँ विचित्र दृश्य प्रकाश में आया कि शव के पहुँचने के पूर्व सैकड़ों अपरिचित महात्मा और साधु-संत क़ब्र के समीप खड़े थे और सभी के आँखों से अश्रुधारा प्रवाहित हो रही थी और सभी शोकाकुल दिख रहे थे।

ज्ञात नहीं कि वह कुल व्यक्ति कौन थे? अन्ततः उन्हीं व्यक्तियों में से एक व्यक्ति जनाज़े की नमाज़ पढ़ाने के लिए

इमाम हुए। लगभग छः हजार व्यक्तियों के साथ ये नमाज़ अदा की गयी। तत्पश्चात धरोहर शव भूमि को समर्पण कर दिया गया। फ़ातिहा पढ़ने के पश्चात सभी पुरूष अपने-अपने घरों को प्रस्थान कर गए और आप खण्डित जिगर निम्नांकित पंक्तियों को पढ़ते हुए अश्रुपूर्ण नैनों के साथ निर्दिष्ट शोकग्रसित निवास-स्थान पर लौट आए।

हैफ़ दर चश्मे ज़दन सुहबते यार आख़िर शुद।
रूए गुल सैरे न दीदेम ज़े बहार आख़िर शुद॥

चेहल्लुम की फ़ातिहा के बाद एकांत पाकर आपकी तबीयत उचाट हो गयी। क्षण-भर भी आपका वहाँ ठहरना कठिन हो गया। इस कारण आप चौधरी की मर्जी के विरूद्ध अपने रोज़गार को त्याग कर मेरठ चले आएं, परन्तु आपको यहाँ भी जी न लगा। दो-चार दिन यहाँ रहने के बाद झाँसी पहुँचे। वहाँ के शहर कोतवाल शैख़ अब्दलु ग़फ़ूर जो एक उच्च कोटि के चरित्रवान व्यक्ति थे। सदा न्याय प्रेमी तथा आतंकियों के विरोधी रहे। ईश प्रेम के कारण उन्होंने हज़रत ग़ौस अली पानीपती (1804-1880 ई0) की शिष्यता ग्रहण की थी। आप (पर वाले शाह साहब) ने उनकी नेक पुत्री सैयदा जैनब से शादी की, जिनसे एक पुत्र (सैयद हकीम ख़ुर्शीद अली) और सात पुत्रियाँ अवतरित हुईं। शिष्टाचार के नाते आप ने वहाँ कई साल गुज़ारे। पत्नी का प्रेम तथा ससुर की आवभगत भी आपको शान्ति प्रदान न कर सकीं।

इस प्रकार व्याकुल हृदय के साथ आप दिल्ली आस्ताना-ए-औलीया पर चले गए। यहाँ पर उस वक्त एक सिद्ध महात्मा (मस्तान) जामा-मस्जिद की सीढ़ियों के नीचे शाही

दरवाजे की ओर रहा करते थे। उस मस्तान की यह विशेषता थी कि वह हर किसी व्यक्ति से गुफ़्तगू (बात-चीत)नहीं करते थे। आप (सैयद तसद्दुक़ अली पर वाले शाह साहब) प्रति दिन उनकी सेवा में उपस्थित होते रहें, लेकिन वह खुदा के दीवाने आपकी ओर ध्यान न दिये। एक दिन तड़के आप उनकी सेवा में उपस्थित हुए। संयोग से उस घड़ी आपके अतिरिक्त कोई दूसरा वहाँ उपस्थित नहीं था। आप सिर्फ अकेले शीश नवाए बैठे थे। आपने वह समय अनुकूल पाकर नम्रतापूर्वक अपनी सारी स्थिति उनपर ज़ाहिर कर दी। उन्होंने सुनने के पश्चात हज़रत सरमद शहीद रह0 अ0 की निम्नांकित रूबाई (चौपाई) पढ़ीः

सरमद ग़मे इश्क बुलहवस रा न देहन्द।
सोज़े दिले परवानः मगस रा न देहन्द॥
उम्रे बायद के यार आयद ब-कनार।
ईं दौलते सरमद हमः कस रा न देहन्द॥

मस्तान साहब यह रूबाई पढ़ने के उपरांत खामोश हो गए। फिर थोड़ी देर बाद फरमाया ''अभी मिलन की घड़ी बहुत दूर है, कुछ दिन और सहन करो, पूरब की ओर बिहार में तुम्हारे हृदय की कलियाँ खिलेंगी। वहाँ अवश्य अपने लक्ष्य को प्राप्त करोगे''

इस प्रकार दिशाविहीन व्याकुलता की अवस्था में एक दिन प्रातः डा० कादिर बख्श साहब मैनेजर मतलून 'साहब बहादुर' फिल्लौर से शैख अमीरूद्दीन दफतरी बिजगंग के साथ आपके मकान पर आए और आपको बाहर से आवाज़ दी। आप मकान के भीतर से निकलकर, उनके पास गए। आदरणीय डॉ0 साहब ने कहा-''तसद्दुक़ अली! क्या तुम बेकार हो?'' आपने जवाब दिया- ''हाँ इस समय मैं बेकार ही हूँ।'' तब उन्होंने प्रस्ताव

रखा- यदि तुझको नौकरी करना पंसद हो, तो हमारे साथ चलो। हम तुझको दस रूपये वेतन पर अपने साहब के यहाँ नौकरी दिला देंगे। आपने डॉ0 साहब के परामर्श को स्वीकार कर लिया और उसी दिन उनके साथ 'फिल्लौर' प्रस्थान कर गए। आदरणीय डॉ0 साहब ने 'फिल्लौर' पहुँचते ही आपका परिचय अपने अंग्रेज़ साहब से कराया। माननीय व्यापारी ने आपसे कहा- ''पर' खरीद सकते हो?'' आपने जवाब दिया, ''हुजूर जैसा नमूना देंगे मैं उसके मुताबिक खरीद सकता हूँ।'' साहब बहादुर आपका जवाब सुनकर अपने कमरे के अन्दर गए और दो-तीन किस्म के पक्षियों के 'पर' लाकर आपको दिखाऐं और कहें-''तुम सिवान जाओ और वहाँ से इसी किस्म के 'पर' खरीदकर हमारे पास भेजा करो।'' तत्पश्चात साहब बहादुर ने बीस रूपया रक़म के तौर पर यात्रा के खर्च एवम् नमूने की क़ीमत के लिए प्रदान किये और फिर आपसे फरमाए- ''हम तुमको पीछे उचित तौर पर रकम प्रेषित करेंगे।'' आप उसी समय वह रूपया लेकर स्टेशन पर आए और रात्रि को रेल में सवार होकर दूसरे दिन ग्यारह बजे के करीब 'मेरठ' पहुँचे और अपनी जायदाद की देख-भाल के लिए नादिर अली खाँ, जो आपके एक सेवक थे, को सौंपकर तथा एक दिन यहाँ ठहरकर फिर रेल-गाड़ी में सवार होकर 'अयोध्या' जो हिन्दु-धर्म का पूजा-स्थल है, के रास्ते होते हुए तीन दिन की अवधि में 'सीवान' में प्रवेश किए। यह सन् 1306 हिजरी यानी 1889 ई0 का ज़माना था।

आपके लिए यह स्थान अपरिचित होने के कारण आपने मुहल्ला सराय में ठहरना ग्रहण किया। आठ दिनों के भीतर आपकी सीवान के कुछ लोगों से मेल-मिलाप हो गयी। इन सभी

दयालुओं में शैख़ अब्दुल रज्जाक साहब, जो स्वयं को हजरत बू अली शाह कलंदर पानीपती की संतान बताते थे, ने आपकी स्थिति पर कुछ अधिक ही कृपा-दृष्टि रखा। दो तीन महीने की अवधि में सैकड़ो लोगों से अच्छी तरह से आपका हेल-मेल हो गया, किंतु आप अपनी हालत को गुप्त रखने के लिए हर आदमी के साथ विनम्र भाव से पेश आते थे और बहुत ही हीनता का प्रदर्शन करते हुए अपनी जीवन व्यतीत किया करते थे। एक बार शैख खुदा जलावन साहब के यहाँ, जो ये भी कलंदर पानीपती ही के संतान से थे, उनका शुभ-विवाह था। किसी कारणवश रसोईयों के अनुपस्थित होने पर आपने स्वयं अपने हाथों सारे बाराती का भोजन पकाया था। इस कारण पूरे बाजार वाले और भी हेय-दृष्टि से आप को देखने लगें, बल्कि सज्जन पुरूष तो ऐसे नीच काम से अत्यधिक घृणा करने लगे और अपनी राजसी दृष्टि में आपको एक गया-गुजरा आदमी समझने लगे, पर आपने उनके इस उपेक्षा और तिरस्कार पर भी, इससे कहीं अधिक अपनी हालत को बुरा और स्वयं को अप्रतिष्ठित बनाए रखे तथा जिस व्यक्ति का नौकर होकर आए थे, उसका काम भी समय-समय पर, जब मिश्कारों (चिड़ीमारों) से 'पर' मिलते रहते थे, तो करते रहते थे, अन्यथा दिन-रात केवल अपनी ही समस्या समाधान की चिन्ता में डूबे रहते और निरंतर अपनी इच्छा की सफलता की सोच में सीवान की संकीर्ण गली-कूचों में दीवानों की भाँति चक्कर लगाया करते थे।

पूरे सीवान में दो मज़ज़ूब आपको दिखाई पड़े, जिसमें एक का नाम 'चुपशाह' और दूसरे का 'हशमत शाह' था। ये दोनों बाजार में रहा करते थे। चुपशाह सदैव ही सर से लेकर पैर तक बेसुध रहा करते तथा हर वक्त मौन धारण किए रहते थे। उनका

निवास हाजी करीमुल्लाह शाह आशिक नवाब के मकान में था। हाजी साहब उनकी बहुत सेवा किया करते थे। जब चुपशाह का देहांत हो गया। तत्पश्चात् इनका 'फैज' देखने में आया कि हाजी साहब कुछ ही दिनों में कढ़ाई बेचते-बेचते धनी हो गए और धनवानों की सुची में प्रविष्ट हुए। इन दो मजजूबों के अलावे कोई तीसरा मजजूब आपको देखने में न आया, किन्तु सीवान में एक बार प्लेग का प्रकोप फैलने से 'हशमत शाह' भी इस संसार से सदा के लिए विदा हो गये। इसके बाद सीवान में न कोई 'मज़ज़ूब' ही दिखाई दिया और न ही कोई 'सालिक' अर्थात् पूरा मैदान रिक्त-सा ही रहा। लेकिन सीवान वालों ने कभी स्वप्न में भी यह कल्पना न की होगी कि सीवान में पधारने वाली यह वह दिग्गज हस्ती होगी, जिसे अध्यात्म-जगत् में सर्वोच्च स्थान प्राप्त होगा और 'ताजुल्मोहक्ककीन' की उपाधि से विभूषित होगा।

अन्ततः जब आपको इसी खोज-बीन और दौड़-धूप में लम्बा समय गुज़र गया तो सहसा व्याकुल हृदय छाती के भीतर घबरा उठा, रात को तबीयत पर दीवानगी का असर और भी ज्यादा बढ़ गया। नयनों से स्वतः आँसू फूट पड़े, इसी बेचैनी में आप पर बेहोशी छा गयी। ऐसी निराशावस्था में हजरत चमन शाह कादरी रावलपिण्डवी रहमतुल्ला अलैह का प्रकाशमान् स्वरूप दृष्टिगोचर हुआ। आपने जब वह आभायुक्त स्वरूप को विद्यमान देखा तो झट शीश को उनके परम पवित्र पैरों पर नवा दिया। हज़रत चमनशाह क़ादरी रह०अ० ने आपके नत-मस्तक को उठाकर अपने सीने से लगा लिया और निर्देश दिया- ''इस प्रकार बेचैन मत हो, दीवाना न बन, कुछ दिन और सहन कर, वियोग की अवधि समाप्त हो चली, अब सन्निकट इस सीवान गन्जे

शहीदाँ में एक परम ज्ञानी महात्मा 'इमामुल अस्फिया', 'पेशवा-ए-फोक्रा', 'सरगरोहे औलिया' हज़रत सैयद शाह अमजद अली सुल्तान रंगीला पधारेंगे। तू उनकी गुणकारी सेवा में उपस्थित होना और फिर उनके हाथ पर गुरूमुख होना, वही तुझको वास्तविकता की दीक्षा देंगे और अस्तित्व-भेद से भली-भाँति अवगत कराएँगे। मैंने बहुत कुछ उनसे तेरे सम्बंध में सिफारिश कर दी है।'' हज़रत चमनशाह ये संकेत देकर विलुप्त हो गए और आपको उसी समय होश आ गया। तब हृदय को अत्यंत उत्साहित तथा भीतर से तबीयत को हर्षदायक और आनन्दवर्द्धक पाया। उस समय आप चुन्नी लाल (बरतन विक्रेता) के मकान में निवास करते थे। चूंकि चमन शाह के निर्देशानुसार आप नौकरी छोड़ चुके थे, इसलिए खर्च की तंगी थी। यहाँ तक की एक बार धनाभाव और दीनता के कारण आपको बीस दिनों तक निराहार व्यतीत करने पड़े थे। यद्यपि ऐसी बारी आप पर आई, किन्तु किसी से भी आपने अपनी दशा की भनक तक न लगने दी। प्रत्येक समय उसी जग-पोषक कृपावान पर दृष्टि टिकी हुई थी। इसी आनंददायी आशा पर इक्कीसवें दिन ईश्वर की ऐसी कृपा हुई, जिसका साकार रूप ये है कि मियाँ मंगली खाँ, जो चरस के व्यापारी थे और बहुत ही मिलनसार तथा दयावान् थे एवं सदैव दरिद्रगण के साथ उपयुक्त व्यवहार से पेश आते थे, परन्तु अपनी उदारता को किसी पर जाहिर न होने देते थे, जिस कारण सर्व-जन उनको कृपण समझते थे, एक दिन आपके पास उपस्थित हुए और फ़रमाने लगे- ''मेरा एक लड़का है, जिसका 'मोहम्मद यूसुफ' नाम है, किंतु बहुत बदमाश और ढीठ है, मैं उससे बहुत ही तंग आ गया हूँ। यदि आप कृपा करके उसे शिक्षा और सभ्यता का

पाठ पढ़ाकर योग्य और दुरूस्त कर दीजिए, तो मैं आपकी कृतज्ञता का आजीवन आभार मानूँगा, मेरा आपसे व्यक्तिगत निवेदन है कि कुछ दिन हमारे ही मकान पर निवास कीजिए। मुझसे जहाँ तक सम्भव होगा, आपकी सेवा में सर्वदा उद्यत रहूँगा।'' आपने उनके इस आग्रह को यथासमय स्वीकार कर लिया और उसी समय चुन्नी लाल के मकान से उठकर, उनके साथ चले गए और उनके ही मकान पर रहना प्रारंभ किया। दूसरे दिन व्यापारी महोदय ने अपने पुत्र को आपके हवाले कर दिया तथा आपने उसे पढ़ाना आरम्भ कर दिया। दो-तीन महीने में ईश्वर की कृपा से मोहम्मद यूसुफ ने 'कुरान पाक' समाप्त कर लिया। खाँ साहब ने आपको पन्द्रह रूपये दिये, तो आपने उस समूचे रकम को ईश्वर के नाम पर गरीबों को दान कर डाला और एक कण भी शेष न रखा। इसी बीच शरद् ऋतु भी आ पहुँची, परन्तु आपने गरम कपड़े के अभाव को किसी पर व्यक्त न किया, क्योंकि प्रथम तो ये कि प्रतिष्ठा की लाज अवरोधित रही और द्वितीय ये कि साधुओं के लिए साधनहीन होना ईश-कृपा का पात्र बनाता है। इसी विचार के तहत आपने सहन करना और संतुष्ट रहना ही सर्वश्रेष्ठ समझा।

संयोगवश एक दिन आप (पर वाले शाह साहब) नमाज़े फज्र के पश्चात् वहीं पर सो रहे थे, चूंकि मकान का दरवाजा खुला हुआ था और शीतल हवा तेज बह रही थी, इसलिए शीत ने जब आपके ऊपर अधिक प्रभाव उत्पन्न किया, तो आपने निद्रावस्था में चटाई को ही ओढ़ लिया। खाँ साहब इसी दौरान कोठरी में, जिसमें आप विश्राम कर रहे थे आ पहुँचे और इस दशा में आपको देखकर बहुत दु:खित हुए तथा उल्टे पैर घर

जाकर एक दूलाई, जिसके पल्ले 'लखनऊ' के थे, लाकर ओढ़ा दिया और वापस चले गए। जब आप जागृत हुए, तो दूलाई को देखकर बहुत लज्जित हुए और अपनी असावधानी पर पश्चाताप किया और शर्मिन्दा हुए तथा उस दूलाई को मोहम्मद युसूफ के द्वारा घर में भेजवा दिया। खाँ साहब ने दूलाई को वापस किया और प्रतियुक्त कहला भेजा, ''मैंने ये दूलाई सिर्फ आपके लिए ही तैयार कराई थी। आप इसे स्वीकार करें।'' आपने उसे फिर वापिस करना उचित न समझा और सहर्ष उसे अपने पास रख लिया, किंतु खाँ साहब ने आपकी ऐसी पर्दापोशी की कि किसी भी आदमी पर ये रहस्य ज़ाहिर न हो पाया।

आपको दो वर्ष तक खाँ साहब के मकान पर रहते गुजर गये, परन्तु अभी तक सुल्तान रंगीला का कुछ संकेत नहीं मिला, जिसके कारण आपके हृदय-सागर में चिंता की लहर अविराम उठती और विलीन होती रहती।एक रात आकस्मिक आपकी कानों में ये आवाज आई-''ऐ तसद्दुक अली! तुझको जिसका निर्देश दिया गया है। वह दक्षिण की ओर स्थित है, लो अब शीघ्र उठ और उस ओर जाने का प्रयास कर, क्योंकि बसंत की घड़ी आ चुकी, अब तेरे आशा की कलियाँ अवश्य खिलेंगी।'' आपने जब ये हर्षदायक शुभ समाचार सुना, तो दिल बाग़-बाग़ हो गया, बाँछे खिल उठी और तबीयत मचल उठी। आप अपने प्रकाशित और जागृत भाग्य पर गौरवान्वित हुए पर आपके लिए शेष रैन का काटना पर्वत-सदृश हो गया, क्योंकि जिगर में बेताबियाँ चुटकियाँ लेने लगीं, कौतूहल ने अपना सर उभारा, अभिलाषा ने अपने पैर निकाले।

सारांश ये कि इसी उत्सुकता में जागते-जागते सुबह हो

गयी। आपने तुरंत उठकर फ़ज्र की नमाज़ पढ़ी और वज़ीफ़ा से विमुक्त हुए। फिर दो-चार आदमियों से बाहर जाकर पूछ-ताछ किया-''सज्जनों दक्षिण की ओर कोई गाँव है? क्योंकि मैंने सुना है कि वहाँ कोई महात्मा ईश-मीत रहते हैं।'' उन सज्जनों ने जवाब दिया - ''यहाँ से लगभग ढ़ाई मील दूरी पर 'टेढ़ी-घाट' नामक एक स्थान है, जहाँ एक बाग़ में कोई महात्मा नवागंतुक आज-कल निवास कर रहे हैं, जो अपने मुखार-बिंदु से ऐसे रहस्यमयी आध्यात्मिक प्रवचन सुनाते हैं कि जिन्हें सुनकर सभी दंग रह जाते हैं। उनके अतिरिक्त कोई अन्य महात्मा या सन्त नहीं रहते हैं, यदि हैं, तो वही हैं।''

आपको जब उन सूचकों से यह सूचना प्राप्त हुई, तो आपने अपने दिल में सोचा और ख़्याल किया कि निस्संदेह ये वही मनोवांछित शीर्षस्थ सत्यता है, जिसकी ख़ुशख़बरी मुझको ग़ैब से दी जा चुकी है। अब चलकर अवश्य भाग्य की परख करनी चाहिए और हृदय की साहस का पता लगानी चाहिए। यह विश्वास करके आप उसी समय 'टेढ़ी-घाट' के लिए रवाना हो गए। जब आप वहाँ पहुँचे, तो उसके समीप एक बाग़ में दो-तीन राहगीर को खड़े देखे। आपने उन लोगों से पूछा,'' जो शाह साहब इस समय आए हैं, वह कहाँ ठहरे हुए हैं? ''उन राहगीरों ने जवाब दिया, बाग़ के पूरब ओर रहते हैं।'' तब आपने बाग़ से गुजरकर और पूरब दिशा में जाकर निर्दिष्ट सर्वोच्च आकाशीय आस्ताना पर पहुँचे, तो दरवाजा के बाहर मियाँ हबीब (जो रंगीला पीर के मुरीद और ख़िदमत-गुज़ार थे) टहल रहे थे। उनसे ज्ञात हुआ कि हुजूर अभी भीतर विराजमान हैं। आपने उनके द्वारा हज़रत (रंगीला पीर) से अनुमति लेकर दरबार में उपस्थित हुए।

आपको उस समय उनकी मोहिनी आकृति से प्रस्फुटित हो रही श्वेत आभा को देखते ही अनायास मुख से निम्न ध्वनि झंकृत हुई:

लिल्लाहिल हम्द हर आन चीज कि खातिर मी खास्त।
आखिर आमद जे पसे पर्दा-ए-तकदीर पदीद।।

यह रजब का महीना और 1309 हिजरी का समय तथा अंग्रेजी हिसाब से फरवरी 1892 ई० का काल था। आपने (पर वाले शाह साहब) हज़रते आला (रंगीला पीर) को आदर भाव से शिष्टापूर्वक सलाम अर्ज़ किया। हज़रते आला (रंगीला पीर) ने आपको अपने ज़बान पाक से इरशाद फ़रमाया, ''बाबा यहाँ 'सलाम' (अभिनंदन) अपेक्षित नहीं है, 'न्याज़' (ख़ाकसारी, नम्रता)का इच्छुक है, कहो मिज़ाज अच्छा है!! कहाँ रहते हो? किस नाम से पुकारे जाते हो? कौन सा काम करते हो? यहाँ कब से ठहरे हो? पंजाब किस लिए छोड़ा? पूरब में किस लिए आए हो? खुद तो मेरे पास कभी न आते! मालूम ऐसा होता है कि किसी जबरदस्त के हाँके हुए आए हो! खैर बाबा बैठो।''

आप (पर वाले शाह साहब) यह आज्ञा पाते ही बैठ गए। अल्लाह! अल्लाह!! क्या विलायत का दबदबा था कि प्रकाशित सौन्दर्य पर दृष्टि न कर सके। हक्का बक्का होकर सर को नीचे झुका लिया। इस घड़ी जिह्वा अवाक् और शरीर हरकत करने से स्पंदहीन हो गया। सुब्हानल्लाह क्या ही न्यारा दरबार था कि इसका चप्पा-चप्पा 'वहदत' की गमक से महक रहा था। हर तरफ बहरे हकीकत की फूहाँरें पड़ रही थीं, दीवारों से जल्वाए हक़ ज़ाहिर हो रहा था। आफताबे अहदीयत जगमगा रहा था।

हज़रते आला (रंगीला पीर) ने आपको स्तब्ध और विह्वल पाकर दोबारे इरशाद फ़रमाया-''बाबा ख़ामोश क्यों हो? कुछ तो

कहो क्योंकि फ़क़ीर को ज्यादा फुर्सत नहीं है।'' आपने उस समय हजरते आला (रंगीला पीर) को उदारता की सुसज्जित प्रतिमा पाकर करबद्ध यों याचना की-''हे आनन्द के घनघोर घटा! यार के वियोग की आग सीने की भट्टी में धधक रही है। यार के तलाश ने खानाबदोश बना रखा है। घर से बेघर हो रहा हूँ। वर्षो वनों की खाक छानते और प्रत्येक नगर तथा गली-कूचों की ठोकरें खाते व्यतीत हो गए। पर कहीं भी यार के ठिकाने का पता न चला। अब चारों तरफ से निराश और हताश होकर इस आस्ताना पर आया हूँ। ईश्वर हेतु दया कीजिए और महबूब का पता बताईये; क्योंकि प्रत्येक क्षण वियोग से घायल हो रहा हूँ। इस अन्तिम वेला में दर्शन की दिव्य झलक से वंचित न रह जाऊँ। ऐ मार्ग-दर्शक! अब इसके अतिरिक्त क्या कहूँ? कि पथ-भ्रष्ट हूँ! खेद है कि पहली ही मंजिल पर अब तक भटक रहा हूँ; इसलिए करबद्ध प्रार्थी हूँ कि कृपा-दृष्टि डालकर परम गंतव्य पद पर पहुँचा दीजिए और नश्वरता (फ़ना) का प्याला पिलाकर बेसुध बना दीजिए; ताकि 'दूई' का पर्दा नयनों से सदा के लिए उठ जाए और प्रियतम् का स्वरूप यत्र-तत्र-सर्वत्र नजर आए। अब तो तनिक कृपा कीजिए और अपने 'हक़ीक़त' के खजाने से मुझको भी कुछ प्रदान कर दीजिए और अस्तित्व-रहस्य से आगाह कराकर एक किनारे लगा दीजिए; क्योंकि याचक होकर आया हूँ और खाली हाथ इस द्वार से न फिरूँगा बल्कि आशा तो यही है कि मनमानी कामना पाकर जाऊँगा।''

वाह! पवित्र स्वभाव में क्या नम्रता और दीनता ओत-प्रोत थी कि आपकी याचना के उत्तर में यही कहा गया-''ऐ बाबा! मैं किस योग्य हूँ? मैं तो कोई ज्ञानी पुरूष नहीं हूँ वरना ज्ञानी पुरूषों का अनुकरण-कर्ता हूँ। अच्छा यदि तुम्हारा यही अनुमान है कि मैं

सिद्ध हूँ, तो क्या हर्ज है विचार और लक्ष्य सही है, तो निस्संदेह अपने उद्देश्य में सफल हो जाओगे। अब मारे-मारे न फिरोगे, क्योंकि जब यार घर में उपस्थित है, तो फिर अन्यत्र कहाँ प्राप्त होगा । ''

''यदि एक बल की रस्सी से काम न चला, तो दो बल की रस्सी बँट कर तैयार करो,पहले एक का दामन पकड़ा था, अब दूसरा भी दामन पकड़ लो। ''हज़रते आला (रंगीला पीर) ने आपसे फ़रमाया ।

आप (पर वाले शाह साहब) हज़रते आला (रंगीला पीर) का यह संकेत भाँप गए अर्थात् उनकी इच्छा चिश्तिया सिलसिला में मुरीद करने की है।

चूंकि आप हज़रत चमनशाह क़ादरी से पूर्व ही मुरीद हो चुके थे, इसलिए आप इस नवीन आज्ञा को शिरोधार्य कर विनति की-''या हज़रत! (रंगीला पीर) तुच्छ सेवक उपस्थित है, जो आज्ञा हो, उसका मैं पालन करूँगा।'' हज़रते आला (रंगीला पीर) ने कहा, अभी जल्दी क्या है? तुम आज ही तो आए हो, ईश्वर ने चाहा, तो कल देखा जाएगा, फिर तुम्हारे हिस्से में जो उपयुक्त होगा, वह किया जाएगा, पर इसको भली-भाँति समझ लो कि ''मंजिलाते सुलूक की राहें (ईश्वर की खोज का मार्ग) बहुत कठिन हैं। उनके तय करने में बड़ी-से-बड़ी और भयानक से भयानक यातनाएँ सहनी पड़ती हैं। ये वह विकराल वन है, जहाँ शेरों का पित्त जल बन जाता है, बड़े-बड़े शीघ्रगामी, इस कंटकयुक्त स्थान में उलझकर निष्काम रह जाते हैं, इस खेल में अक़्ल के छक्के छूट जाते हैं, बड़े-बड़े खिलाड़ियों के दाँव मात खा जाते हैं। इस कारण बहुत ही कम जाँबाज बाजी मार पाते हैं। इससे अच्छा यही है कि 'नमाज़' एवं 'रोज़ा' किये जाओ तथा

'आज्ञा' और 'निषेध' का ध्यान रखो, किंतु प्रेम-जाल में न फंसो, क्योंकि "इश्क" का बोझ उठाना सबके बस की बात नहीं।"

आपने उपदेश प्रद बातें सुनकर निवेदन किया– "या हज़रत! यदि शिष्य (मुरीद) का विश्वास अपने गुरू (पीर) से सच्चा है, तो अवश्य यह मैदान सहजपूर्वक तय हो जाएगा और इसके अतिरिक्त ज्ञानार्थी का विश्वास स्वयं उसका पथ-प्रदर्शक है, निःसंदेह एक दिन प्रियतम् के द्वार तक पहुँचा देगा।" हजरते आला (रंगीला पीर) ने आपके इस कथन पर साधुवाद कहा और फिर कहा कि शतशः धन्यवाद तेरे इस समझ पर!!! तत्पश्चात् हज़रत अमीर शाह रामपुरी चिश्ती साबरी (1788-1873 ई0) की रहस्यमय ग़ज़ल अपने मुखार-बिन्दु से इरशाद किया। अर्थात् उसी पल आपके हृदय-पट पर "हमावुस्त" (एको ब्रह्मा द्वितीय नास्ति) का मानचित्र अपने दैवी लेखनी से खींच दिया। वह यह है:

ये जो सूरत है तेरी, सूरते जानाँ है यही
यही नक्शा है, यही रंग है, सामाँ है यही
बिस्तरा टाट का दो पारचा कम्बल की कुलाह
ताजे ख़ुसरू है यही, तख़्ते सुलेमाँ है यही
अपनी हस्ती के सिवा गैर को सज्दा है हराम
मज़हबे पीरे मुग़ाँ, मशरबे रिन्दाँ है यही
दोनो आलम में नहीं तेरे सिवा ऐ शाहा
यही दानिश है, यही बूझ है, इरफाँ है यही

आपने इस ग़ज़ल को सुनकर निवेदन किया, "या हज़रत! सेवक ने भी इसी बहर (छन्द) में अभी कुछ लिखा है। यदि आप अपने श्रवण-शक्ति पर पहुँचने वाले कष्ट पर क्षमा प्रदान करें, तो प्रस्तुत करूँ।" हज़रते आला (रंगीला पीर) ने आपसे

फ़रमाया बहुत अच्छा! हमको इसका सुनना पंसद है" आपने शिष्टाचार निभाते हुए स्वंय गजल पढ़ी। वह यह है:-

बू यही, गुल है यही, बुलबुले नालाँ है यही
नख़्ले पैवंद यही और गुलिस्ताँ है यही
मौजे कुल्ज़ुम है यही, कोह-व-ब्याबाँ है यही
दुर्रे यकता है यही, लाले बदख़्शाँ है यही
हुस्ने लैला है यही, ख़्वाबे ज़ुलैख़ा है यही
क़ैस दीवाना यही, यूसूफे जिन्दाँ है यही
बूजहल कुफ़्र में, इस्लाम में अहमद वह बना
शिर्क हिन्दू है यही, दीने मुस्लमाँ है यही
किसको जाहिल कहूँ और किसको कहूँ मैं आलिम
अक़्ले फ़रज़ाना यही, तिफ़्ले दबिस्ताँ है यही
तूर पर जल्वे से, जिसके हुए मूसा बेख़ुद
आशिकों! देखो वह रश्के महेताबाँ है यही

हज़रते आला (रंगीला पीर) ने आपकी इस ग़ज़ल को सराहा। तत्पश्चात् विदा होने की आज्ञा दी। आप चरण-स्पर्श कर बाहर आए। संध्या का समय हो चला था, इस कारण नमाज़े मग़रिब वहीं अदा की और नमाज से निवृत्ति पाने के बाद मकान को वापस आ गए। किन्तु पूरी रैन बेचैनी और व्याकुलता में व्यतीत हुई। विवशतः पलंग पर से उठ बैठे। चूँकि रात्रि शेष थी, इसलिए सूर्योदय की प्रतीक्षा करने लगे, परन्तु उस वक़्त आपकी अजीब हालत थी कि सारा बदन आंतरिक ताप से अंगारों की भाँति दहक रहा था, मुख से विषैली हवा की लपटें निकल रही थीं, नैना प्रियतम् के दिव्य दर्शन को तरस रहे थे। अन्ततः इसी तप्तावस्था में मुवज़्ज़िन ने अज़ान की सदा बुलन्द की; प्रभात

कालिक मुर्गों ने बांगे देनी शुरू की। इस आवाज़ को सुन आपकी तबीयत को कुछ संतुष्टि हुई। थोड़ी देर बाद सूर्य अपनी सुनहरी किरणों के साथ आकाश के सीना को चीरता हुआ बाहर आता दिखाई दिया। तब हृदय ने चलने को प्रोत्साहित किया; बारम्बार छाती को गुदगुदाने लगा, किन्तु अदब ने रोका और मना किया कि अभी ज़ाते पाक (रंगीला पीर) ईश्वर की याद में मगन होगी, इस समय वहाँ किसी अन्य का प्रवेश उचित नहीं, जरा साँस ले; उद्विग्नता से क्या लाभ है? विवश हृदय ने ठहराव किया और आठ बजे के करीब दीवानों की तरह प्रस्थान कर गए तथा अत्यंत सहजता के साथ हज़रते आला (रंगीला पीर)के धाम पर जा पहूँचे। सेवक ने हज़रते आला (रंगीला पीर) को सूचना दी– ''वो (पर वाले शाह साहब) प्रेमाकांक्षी उपस्थित है; आस्ताना पर खड़ा है; चरण-स्पर्श का इच्छुक है।'' हज़रते आला (रंगीला पीर) का आदेश हुआ कि उसे भीतर आने दो। सेवक ने आपको आवाज दी। आप आज्ञा मिलते ही कृपा-वान की दरबार में प्रवेश किये। सर्वप्रथम आदाब अर्ज़ किया। फिर करबद्ध खड़े रहे। हजरते आला (रंगीला पीर) ने बैठने का आदेश दिया। आप दो-जानू (घुटने के बल बैठने को दो जानु कहते है।) बैठ गए। तब हज़रते आला (रंगीला पीर) ने आपसे दरयाफ़्त किया– ''वजू करके आए हो?आपने कहा,या हज़रत! सबेरे वज़ू की थी।''

हज़रते आला (रंगीला पीर) ने कहा–''फिर वजू ताजा कर लो।''आपने झटपट आज्ञा का पालन किया। इसके पश्चात् हजरते आला(रंगीला पीर) ने कहा ''दो रक्अत नमाजे आशिकाना अदा कर लो।'' आपने इस विशेष नमाज को अदा किया और इससे निवृत्ति पाने के पश्चात् हज़रते आला (रंगीला पीर) ने

आपको अपने समक्ष बैठाया और आपका हाथ अपने पवित्र हाथ पर रखकर पहले सात बार 'अस्तग्फार' पढ़ाई। फिर 'पाँचों कलमा' दरूद शरीफ के साथ पढ़ने की शिक्षा दी और गूढ़-गुरूमुख होने का श्रेय प्रदान किया तथा आपको चिश्तिया, साबरिया सिलसिला में दाखिल करके 'अमीर सुल्तान असद' की उपाधि प्रदान की एवं एक बीड़ा पान की अपनी पुनीत ओष्टों से स्पर्श कराकर दिये। आपने उसे ईश्वर का नियामत समझ कर तत्काल ही मुख-ग्रहण कर लिए। तत्पश्चात् हज़रते आला (रंगीला पीर) ने अपनी कृपामय हस्त को ऊपर उठाकर इनके कल्याण के लिए पालनहार के दरबार में प्रार्थी हुए।

ऐ प्रेम-मद्यशाला के मद्यपान-कत्ताओं! उस पल जो स्वाद, मघुरता और प्रसन्नता पर वाले शाह साहब के हृदय को प्राप्त हुआ, वह लेखनी के वर्णन से असमर्थ है। पन्द्रह वर्ष से जिस रहस्य प्राप्ति के इच्छुक और खोज-कर्त्ता थे, वो एक बिन्दु में समझा दिया। यार से मिलने का एक सहज उपाय बता दिया। पलक-झपकने में ही ''दूई'' का परदा चाक कर डाला! इसी अवसर के लिए कवि वाण झंकृत हुई है–

परदे को तअय्युन के दरे दिल से उठा दे।
खुलता है अभी पल में तिलिस्मात जहाँ का।।

आस-निरास के भव-सागर से तट के समीप ला पहुँचाया। सुब्हानल्लाह मुर्शीद की शान भी अजीब है :

सतगुरू ऐसा चाहिए, जो सकली गुड़-सा हो।
जनम-जनम का मोरचा, जो पल में देवे खोय।।

अब आप रंगीला पीर जैसे पीर के प्राप्त होने के उपरांत राहे सुलूक (ज्ञान-मार्ग) को इतनी तीव्र गति से तय करने लगे

कि जिसके सामने सूर्य के प्रकाश की गति भी मद्धिम पड़ गयी। अर्थात् आपके पीर बहुधा कहने लगे कि जिस मंजिल को तय करने में औरों को वर्षों लगते हैं, मेरा 'मौलवी'(1) उसे तो 'पल' में तय करता है। तभी तो आपको ईश्वर द्वारा गुरू की माध्यम से ''तेज़रफ़्तार'' की उपाधि से सुशोभित किया गया। आपको 'रईसुलमोतवक्कलीन' (सर्वसम्पन ईश्वरालम्बी) की उपाधि भी गुरू द्वारा ही प्रदान की गई और फिर तहक़ीक़ी दुनिया में अपने स्पष्ट, असाधारण, निरूपम और अद्वितीय वक्तव्य के कारण 'ताजुलमुहक्ककीन' की उपाघि से प्रतिष्ठित हुए। आपने परमेश्वर तक पहुँचने में ईश्वर के अतिरिक्त स्वयं को भी तिलांजलि दी और फिर बक़ाबिल्लाह की मंजिल प्राप्त की।

अब पर वाले शाह साहब का क्या पूछना कि रहस्यवादी वातावरण में उड़ने के लिए 'पर' (पंख) मिल गया, पर (लेकिन) बारम्बार बलि जाईये पर वाले शाह साहब पर कि उड़ान में नियंत्रण और धैर्य की यह हालत कि रहस्यावादी वातावरण की हवाएँ दम साधे रहती थीं–!!! ऐसी रहस्यमय खामोशी, ऐसी नम्रता और हीनता, ऐसी सहनशीलता और क्षमता, ऐसी सदाचारिता और सज्जनता, ऐसी सादगी और शालीनता, ऐसी इच्छा-दमन, ऐसा आत्म नियंत्रण, ऐसा भरोसा और गम्भीरता कि बाईस वर्ष तक सीवान में रहने के वावजूद ऐसी कोर-दृष्टि कि यहाँ के गण आपके परख से परे रहे। ये सबसे बड़ा दुर्भाग्य था, जो सीवान वासियों की उपलब्धि बनी।

हज़रत सय्यद शाह तसद्दुक अली असद (जिसे सीवान वासियों ने पर वाले शाह साहब की उपाधि प्रदान की) रहस्यवादी

(1) रंगीला पीर 'पर' वाले शाह साहब को 'मौलवी' से सम्बोधित किया करते थे।

सागर के ऐसे सावधान तैराक थे कि लहरों से पूछिये तो अपनी अज्ञानता की स्वीकृति को जाहिर करे। आप निम्न पृष्ट की लहरों के वो द्रष्टव्य दृष्टांत थे कि उच्च पृष्ट की सतह के पानी को भी विदित नहीं परंतु वही निम्न पृष्ट की लहर जब उभर कर सामने आई, तो ऐसी हृदयाकर्षक हो गयी कि दूसरी लहरों ने आकर गले लगा लिया और देखने वालों ने देखा कि आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अपने आँचल को फैला दिये कि उस प्रवाहित लहर से चुल्लूभर पानी नसीब हो जाए कि हृदय की मनोकामना पूर्ण हो।

——

हक़ हक़ हक़

इरशाद

सैयद तसद्दुक अली असद पर वाले शाह साहब ने 1311 हिजरी तदनुसार 1893 ई० में अपने धर्म गुरू हज़रत सैयद शाह अमजद अली (रंगीला पीर)के नाम पर एक ख़ानक़ाह का शिलान्यास कराया, इसके साथ ही एक मस्जिद ''मस्जिदे बैतुल मौजूद'' तथा एक कुआँ का भी निर्माण कराया। ख़ानक़ाह की स्थापना होने के पश्चात् आपके गुरू महाराज (रंगीला पीर) 'टेढ़ीघाट' से स्थांतरित होकर 'ख़ानक़ाह अमजदिया' में रहना प्रारंभ किया।

आपने अपने गुरू महाराज (रंगीला पीर) की आज्ञा और मुहम्मद सल० अ०व० की स्वीकृति पर अध्यात्म् सम्बंधी चार बृहद् अनूठी और अपूर्व रचनाओं को सम्पन्न किया। वस्तुतः, ये उन मलफूज़ात (वाणी संग्रह) का संकलन है, जिसे आपने समय-समय पर अपने गुरू महाराज (रंगीला पीर) से सुन रखा था। ये रचनाएँ (ग्रन्थ) निम्नलिखि हैं:-

1. जलवए हकीकतः यह रचना गद्य रूप में है और 1995 ई० में प्रकाशित हो चुकी है। इसमें 95 शीर्षकों के अन्तर्गत तत्त्वदर्शन की समीक्षा प्रस्तुत की गयी है। पृष्ठों की संख्या 332 है। आकार डीमाई तथा मूल्य मात्र 125 रूपया है।
2. सिर्रे हस्तीः यह भी रचना गद्य रूप में है तथा 1997 ई०

में प्रकाशित हो चुकी है, जिसमें 172 शीर्षकों के अन्तर्गत तत्त्वदर्शन की विवेचना थोड़े विस्तार के साथ की गयी है। पृष्ठों की संख्या 472 है। आकार 11"×7" तथा मूल्य मात्र 350 रूपया है।

3. कासए इश्कः यह रचना पद्य रूप में है और 1998 ई० में प्रकाशित हो चुकी है, जो पद्य के विभिन्न रूपों में नौ अध्यायों के अन्तर्गत सम्मिलित है। साइज डबल क्राउन है। छपाई कमप्यूटरीकृत है। पृष्ठों की संख्या 192 तथा मूल्य मात्र 100 रू० है।
4. इरशादे आजम वाहिदःयह गद्य रूप में है और 2000ई0 में प्रकाशित हो चुकी है, जो 245 शीर्षकों के अन्तर्गत सविस्तार विवेचित है। पृष्ठों की संख्या 712 है। मूल्य मात्र 450 रू० है।
5. इरशादे आजम दोएमः अभी अप्रकाशित है और प्रकाशित होने के विभिन्न चरणों से गुजर कर अंतिम चरण में दाखिल है।

ये सभी रचनाएँ ऊर्दू भाषा में हैं, जो 9 वर्षो की कठिन पारिश्रमिक फलस्वरूप 1320 हिजरी/1902 ई0 में पूर्ण हुई। किन्तु ये रचनाएँ पर वाले शाह साहब के विसाल के लगभग 70 वर्ष बाद प्रकाशित हुई। ग़ौरतलब है कि पर वाले शाह साहब का साहित्यिक क्षेत्र में अविस्मरणीय योगदान है। आपने उपर्युक्त रचनाओं के माध्यम से गद्य एवं पद्य दोनों विधाओं में पारंगत होने की सफल अनुभूति कराई है। आपकी भाषा शैली फ़साहत व बलाग़त से ओतप्रोत है। तात्पर्य ये कि आप महान सूफी के साथ-साथ एक उच्च कोटि के लेखक एवं महान दार्शनिक भी थे।

जब आप (पर वाले शाह साहब) ख़ानक़ाह अमजदिया के बाह्य कमरा का निर्माण कार्य करा रहे थे, तो इसी दौरान आपके गुरू महाराज (रंगीला पीर) को बंगाल (जिला दीनाजपुर ग्राम बहला) की यात्रा पर जाना हुआ, उन्होंने जाते समय आपसे फरमाया–''मौलवी! ख़ानक़ाह के मुख्य द्वार का दरवाजा जरा बड़ा रखना; शायद कोई डोली आएगी।'' आप उनके द्वारा कहे गए इस कथन के संकेत को उस घड़ी भाँप न सके।

कुछ माह तक बंगाल रहकर वे (रंगीला पीर) फिर बिहार (सीवान) आने के लिए वहाँ से प्रस्थान किये। उनके साथ कुछ सेवक भी मौजूद थे। कहा जाता है कि जब ट्रेन कटिहार स्टेशन से खुली, तो वे दो-जानू बैठ गए और ट्रेन के कुछ दूर जाने के बाद सेवकों से पूछा-''क्या सीवान आया?'' वे (रंगीला पीर) यही प्रश्न बार-बार और कुछ-कुछ अन्तराल पर दोहराते रहे। अन्ततः जब ट्रेन दरौंदा के आस-पास थी। तब उन्होंने फिर वही प्रश्न अन्तिम बार पूछा। सेवकों ने उत्तर दिया ''या हजरत! (रंगीला पीर) सीवान अब आनेवाला है।'' इस उत्तर को सुनते ही वे मौन धारण कर लिए और इसी अवस्था में ब्रह्मलीन हो गए। इन्ना लिल्लाहे व इन्ना एलैहे राजेऊन।

यह 1910 ई० का वर्ष, अप्रैल का महीना बुध का दिन और दो बजे रात्रि का समय था।

जब ट्रेन सीवान स्टेशन पर रूकी, तो सैयद अमजद अली (रंगीला पीर) के परम पवित्र शव को ट्रेन से नीचे उतारा गया और पर वाले शाह साहब को विसाल की सूचना दी गयी। पर वाले शाह साहब यह दुखद सूचना सुनते ही स्तब्ध और विह्वल हो

उठे। तत्क्षण ही आपका दमकता हुआ चेहरा उदास हो गया; हँसता हुआ दिल रो पड़ा; मनोहर वातावरण शोकाकूल हो उठा। अन्ततः इसी रूदन-क्रन्दन के साथ आप (पर वाले शाह साहब) खाट लेकर सीवान रेलवे स्टेशन गए और वहाँ से उनके पुनीत शव को खाट पर रखकर स्टेशन के मुख्यद्वार से होते हुए ख़ानक़ाह अमजदिया में लाए। रेल-विभाग के किसी कर्मचारी तक ने इस संबंध में कुछ पूछ-ताछ तक न किया।

जिस समय शव सहित खाट ख़ानक़ाह अमजदिया के मुख्य द्वार से प्रवेश किया, उस समय सहसा आपको उनके रहस्यमय कथन का एहसास हुआ कि हज़रते आला (रंगीला पीर) ने तो अपने ईश-मिलन की भविष्यवाणी की ही थी।

रंगीला पीर बाबा के धरोहर शव को ख़ानक़ाह अमजदिया के बीच सहन में पूरब तरफ उनके शयनकक्ष के भीतर दफनाया गया। यहीं इनका अंतिम विश्राम-स्थल है, जहाँ श्रद्धा से सभी का मस्तक अनायास ही झुक जाया करता है। बाद में पर वाले शाह साहब ने 1911 ई0 में उसपर एक आलीशान रौजा का निर्माण कराया। प्रतिवर्ष इसी ईश-मिलन की तारीख में 15 रबीउस्सानी को 2 बजे रात्रि में उर्स होता है, जिसमें कव्वाली भी होती है जो महफिल के वातावरण को पूरी तरह ईशमय बना देती है। इसमें देश के विभिन्न प्रांतों के लोग सम्मिलित होकर फैज़े अमजदी से खूब ही मालमाल होते हैं।

कहा जाता है कि रंगीला शाह के धरोहर शव को भूमि को समर्पण करने के पश्चात् उनके परम प्रिय शिष्य और चहेते खलीफा हज़रत सैयद शाह तसद्दुक अली सुल्तान असद, उनकी

क़ब्र के पायंती बैठकर निरंतर रोना प्रारंभ कर दिया। यहाँ तक कि आँखों से झर-झर बहती अश्रुधारा पर वाले शाह साहब के दामन को तरबतर कर दिया था। इसी अवस्था में तीन दिन उपरांत क़ब्र से आवाज आई– ''ऐ मौलवी! तू रोता क्यों है? मैं तेरे सम्मुख उपस्थित हूँ।''

हजरत सुल्तान रंगीला के जानशीन और ख़ानक़ाह अमजदिया के दूसरे सज्जादानशीन होने का श्रेय पर वाले शाह साहब को ही प्राप्त हुआ और आपने सफलतापूर्वक इस कार्य-भार को संभाला। आपके दिल में रंचमात्र भी दुनिया का लोभ न था। ये तो इसी बात से प्रमाणित होता है कि आपने मेरठ की चल-अचल सम्पत्ति को ठोकर मार कर बोरीयानशीनी ग्रहण किया। किसी अवसर पर आपके गुरू महाराज (रंगीला पीर)ने आपसे फरमाया था–''ऐ मौलवी! तुझे खुदा ने अपने आशिकों में स्वीकार कर लिया है, जो मांगोगे मिलेगा, परन्तु मांगने से न मांगना बेहतर है।'' यही कारण है कि आपने आजीवन किसी भी चीज़ की इच्छा जाहिर न की, ईश्वर की रज़ा ही इनकी रज़ा रही।

पर वाले शाह साहब के शिष्यों और खलीफों की संख्या बहुत कम है, क्योंकि आप अधिक शिष्य बनाना पसन्द न करते थे। वैसे तो साबरिया शाखा के गुरूओं का ये अमल रहा है कि वह कम-से-कम शिष्य और खलीफा बनाते रहे हैं लेकिन ये चन्द हजरात भाग्यवान हैं जिन्हें आपने अपनी शिष्यता से विभूषित किया–

1. हजरत सैयद शाह हकीम खुर्शीद अली (1900-1974):
आप सैयद शाह तसद्दुक अली सुल्तान असद पर वाले शाह साहब के पुत्र तथा अपने पिता के ही खलीफा थे। आपने लखनऊ के

मुम्बउलतिब नामक कालेज से हकीमी की डिग्री प्राप्त की थी यानी आप सनद-याफ़्ता हकीम थे। आप कितने ही लोगों के असाध्य रोगों का निदान कर दिया करते थे कि लोग दंग रह जाया करते थे। आपको अपने पिता के जानशीन और ख़ानक़ाह अमजदिया के तीसरे सज्जादानशीन होने का श्रेय प्राप्त हुआ। आपने 1369 हि0/1950 ई0 में मौज़ा बहला जिला दीनाजपुर (पश्चिम बंगाल) में एक ख़ानक़ाह और मस्जिद की स्थापना की जहाँ आपका एक हुजरा अवस्थित है। बहला के मुरीदीन आपके अन्तिम विश्राम स्थल के लिए इस ख़ानक़ाह का चयन किया था, किन्तु आपने स्वीकृति न दी। आपका निधन 4 सफर 1394 हिजरी तद्नुसार 27 फरवरी 1974 ई० को बुधवार के दिन 12 बजे रात्रि ख़ानक़ाह अमजदिया सीवान में हुआ और अपने पिता के पुनीत चरणोत्तर में दफन किये गए।

ख़ानक़ाह अमजदिया के चौथे सज्जादानशीन और हकीम खुर्शीद अली के जानशीन होने का श्रेय आपके पुत्र हज़रत सैयद शाह सगीर अहमद अमजदी चिश्ती साबरी मद्दा ज़िल्लुहुल आली को प्राप्त है,जिनके संरक्षण एवं छत्र-छाया में ख़ानक़ाह अमजदिया तीव्रगति से प्रगति के रास्ते पर अग्रसर है। आप प्रकाशन तथा निर्माण दोनों एतबार से प्रशंसनीय कार्य अंजाम दे रहे हैं।

2. हजरत शाह अबूज़फर उर्फ वकील साहब (1898-1975):
आप जिला नालंदा, ग्राम बेलछी के निवासी थे। वकालत आपका पेशा था। वकालत की डिग्री अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सीटी से प्राप्त की थी।

आपके मुरीद होने की तारीख रबी-उस-सानी 1331 हिजरी (मार्च 1913 ई0) है। आपको अव्वल खलीफा होने का सौभाग्य प्राप्त है। आपको अपने पीर-व-मुर्शिद (पर वाले शाह

साहब) से 'मक़बूल शाह' की उपाधि प्राप्त हुई थी। अदब की ये स्थिति थी कि सीवान रेलवे स्टेशन पर ट्रेन से उतरते ही अपनी जूतियाँ थैले में डाल लेते। फिर जितने दिन सीवान में निवास करते, नंगे पैर ही रहा करते। दो छटांक भोजन ग्रहण करते। पीर-व-मुर्शिद के विसाल के बाद ख़ानक़ाह अमजदिया के मुतवल्ली पद पर सुशोभित किये गए। आपको निशान के रस्म की जिम्मेदारी सौंपी गयी थी। क़व्वाली की महफिल में गत की धुन पर खूब हाल खेलते और बेहाल हो जाते।

आप अपने पीर-व-मुर्शिद के चरणोत्तर में दफन किये गए। विसाल की तारीख 18 रबी-उल-अव्वल 1395 हिजरी तद्नुसार 1 अप्रैल 1975 ई0 है।

3. हजरत हसरत अली (1908-1939):

आपको अपने पीर-व-मुर्शिद एवं पिता (पर वाले शाह साहब)से 'बालक शाह' की उपाधि प्राप्त थी। आपका जन्म 4 रबी-उल-अव्वल 1326 हि0/6 अप्रैल 1908 ई0 को हुआ। आपका अन्तिम विश्रामास्थल ख़ानक़ाह अमजदिया सीवान के सहन में अपने पीर-व-मुर्शिद के रौज़ा के पहलू में पश्चिम तरफ पाँच-सात क़दम की दूरी पर खुले आसमान के नीचे अवस्थित है। आपके विसाल की तारीख़ 1357 हि0/1939 ई0 है।

4. बाबा खलील दास चतुर्वेदी (1898-1966):

बाबा खलील दास चतुर्वेदी से प्रसिद्ध कागजी मुहल्ला सीवान के निवासी थे। 21 मार्च 1898 ई0 को सीवान में जन्म हुआ। पिता का नाम शाह अमीर हसन था। इतिहास के पन्नों को पलटने से ज्ञात होता है कि आप बी0 एन0 कालेज की पढ़ाई छोड़कर गाँधी जी की आवाज पर डा0 मग़फ़ूर अहमद एजाजी

और प्रजापति मिश्र के साथ असहयोग आन्दोलन में शामिल होगए।

बाबा खलीलदास कई भाषाओं के प्रकाण्ड विद्वान थे अरबी, फारसी, संस्कृत, उर्दू, हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी और अन्य विदेशी भाषाओं के कुशल ज्ञाता थे।

ख़ानक़ाह अमजदिया आपका आध्यात्मिक केन्द्र था। आप हजरत सैयद शाह तसद्दुक अली असद उर्फ पर वाले शाह साहब के ख़ास खलीफाओं में शुमार किए जाते थे। पहले आर्य समाज से जुड़े रहते थे लेकिन बाद में पर वाले शाह साहब के सम्पर्क में आ जाने से इनके विचार धारा में अपूर्व परिवर्तन हुआ और पर वाले शाह साहब से प्रेरित होकर उनके चेला बन गए।

कुरान शरीफ का अंग्रेजी अनुवाद और सिलसिला चिश्तिया साबरिया का मंजूम शजरा फारसी भाषा में आपकी यादगार है। आपने निशान और गागर के लिए गजलें लिखी हैं जो सुरक्षित है। आपकी लिखी हुई प्रकाशित पुस्तकों की संख्या एक सौ तैंतालिस बतायी गयी है। 'अली और मुआविया' आपकी एक प्रसिद्ध कृति है, जिसपर भारत सरकार ने रोक लगा दी थी। आपने सीवान से अपनी सम्पादकता में 'मुसलह' नामक एक मासिक पत्रिका भी जारी किया था; जिसमें वेदों की व्याख्या होती थी।

आपका निधन 28 अक्टूबर 1966 ई0 को बनारस में हुआ। आपका विश्रामास्थल ''ऐवान-ए-खलील'' बनारस के आलमपुरा में है। आपसे सिलसिला-ए-तरीकत जारी है। आप ने अपने पीर-व-मुर्शिद की शान में यह शेर कहा है:

सख़ी दरबार है तेरी तसद्दुक़ शाह सीवानी
तू कश्ती पार कर मेरी तसद्दुक़ शाह सीवानी

बाबा ख़लीद दास चतुर्वेदी के एक प्रसिद्ध ख़लीफ़ा हज़रत बाबा हातिम शाह (विसालः 27 सफर 1406 हि0/11 नवम्बर 1985 ई0, मज़ारः मौज़ा मटियारा, लार, यू0पी0) थे। बाबा हातिम शाह के एक ख़लीफ़ा हज़रत बाबा हबीब शाह (विसालः 22 रजब 1415 हि0/25 दिसम्बर 1994 ई0, मज़ारः मौज़ा छाता सीवान) को मैंने बचपन में रंगीला पीर के आस्ताना पर हाज़िरी देते देखा था। वह उस समय बिल्कुल ज़ईफ हो चुके थे।

5. हजरत बाबा मुराद अली शाह रह0 अ0: आपके मुरीद होने की तारीख 4 रजब 1322 हिजरी/14 सितम्बर 1904 ई0, बुधवार तथा विसाल की तारीख 17 अप्रैल 1951 ई0 दिन मंगलवार प्रातः 9 बजकर 7 मिनट है। आप उत्तर प्रेदेश जिला देवरिया ग्राम मझौली (पश्चिम मोहल्ला) के निवासी थे। मजार शरीफ सूबा बंगाल जिला बर्दवान आसनसोल (बर्नपुर) में वर्त्तमान है। प्रति वर्ष अप्रैल के महीने में आपका उर्स बड़ी धूमधाम से मनता है।

हज़रत मौलाना सफी शाह उर्फ़ बाबा भोला शाह आपके खलीफा हैं, जिनकी एक ख़ानक़ाह उत्तर प्रदेश जिला देवरिया मौजा मझौली में मौजूद है, प्रति वर्ष 27 बैसाख को बड़े पैमाने पर उर्स का आयोजन होता है, जिसमें कई दिनों तक लंगर बांटा जाता है। हज़रत बाबा भोला शाह के मुरीदों की तादाद लाखों में बताई जाती है और खलीफाओं की तादाद भी अच्छी खासी है। मुझे कई बार भोला शाह साहब से मुलाकात का अवसर प्राप्त हुआ है। आपके शरीर की मुद्राएँ और हाव-भाव से सूफी की पूरी झलक जाहिर होती है। भोला शाह साहब के एक खलीफा जनाब

अता शाह साहब से मेरे मधुर संबन्ध हैं।

6. हजरत अख्तर हुसैन गयावी/बेराग शाह (1899-1965):

आपका जन्मस्थली गया मौजा मानपुर था। तिजारत आपके पूर्वजों का पेशा था। आप पीर-व-मुर्शिद की राह में बेदरेग़ रूपये नज़्र करते थे।

आपकी रहन-सहन और हाव-भाव सूफियों की तरह थी। आप ज्यादातर काले रंग का लम्बा कुर्ता और काले रंग की लुंगी पहनते थे। सिर के बाल इतने लम्बे थे कि लटें कांधे तक झूलती रहती थी।। यही वजह है कि सारे लोग आपको 'शाह साहब' से याद करते थे।

आपने आखिरी दौर में तसव्वुफ (अध्यात्मवाद) से सम्बन्धित दो किताबों 'जलवा-ए-हक़ीक़त' और 'जलवा-ए-शरीअत' की रचना की, जो 1950 ई0 में प्रकाशित होकर मन्ज़रेआम पर आ चुकी थी मगर अब ये किताबें नायाब हो चुकी हैं। जलवा-ए-हक़ीक़त की एक प्रति ख़ानक़ाह अमजदिया सीवान में सुरक्षित है। इस किताब में हजरत सैयद शाह तसद्दुक अली उर्फ पर वाले शाह साहब सुल्तान असद के मलफ़ूज़ात (वाणी संग्रह) और मकतूबात (पत्र संग्रह) हैं।

आपने पीर-व-मुर्शिद के विसाल के बाद उनकी जूतिया, उनके सिर और दाढ़ी के बाल के अलावे कुछ तबर्रुकात घर ले गए थे, जिन्हें हर साल उनके विसाल की तारीख पर ज़ियारत किया करते और उर्स का प्रबन्ध करते थे, जिसमें नामी गिरामी क़व्वाल शामिल हुआ करते थे।

आपका विसाल बृहस्पतिवार के दिन 18 जुमादिल-आख़िर 1385 हिजरी तदनुसार 14 अक्टूबर 1965 ई0 को सुबह के साढ़े तीन बजे हुआ और आबगीला के तारीखी क़ब्रिस्तान में सुपुर्दे ख़ाक हूए।

——

हक़ हक़ हक़

तजल्ली

पर वाले शाह साहब का क़द साधारण, रंग गेहूँवा, शरीर दुबला- पतला, माथा प्रशस्त, केश काले और जुल्फें इतनी लम्बी थीं कि काँधे तक झूलती रहती थीं। मूँछे बड़ी-बड़ी किंतु क्रमबद्ध दाढ़ी बड़ी और आँखें चमकदार थीं।

पर वाले शाह साहब को रंगीला पीर की ओर से काले और केवल काले रंग की वस्त्र धारण करने की आज्ञा थी। आप फनाफिस्शैख थे। साधारण अवस्था में बदन पर तहबंद और कुरता तथा पैरों में खड़ाऊँ एवम् हाथ में कभी-कभी छड़ी रहती। सिर अधिकाशंतः नग्न और कभी-कभी पगड़ी बाँधे रहते। बहुधा केशों में चोटी गुंथ लिया करते थे। यात्रा के दौरान आप शरीर पर सलवार, चोगा और कभी-कभी शेरवानी तथा पैरों में कामदार जूता धारण कर लेते। हाथ-मुँह पोछने के लिए तौलिया भी साथ रखते। आँखों पर ऐनक रहता और समय देखने के लिए जेब घड़ी पास रहती। भोजन पकाने के लिए बरतन-बासन अपने साथ लेकर चलते। एक झोला, जिसमें जल-पान हेतु कुछ सामग्रियाँ होती, कांधे पर लटकाए रहते; गेहूँ की चपाती, उड़द की दाल और अदरक का कुचा आपका पसंदीदा भोज्य-पदार्थ था। चाय बार-बार और बहुत ही चाव से पिया करते थे और पिलाया करते थे, जिसका प्रचलन अभी भी ख़ानक़ाह अमजदिया में जारी है

और वैसा ही हमेशा जारी रहेगा। जहाँ पर आप विराजमान होते, वहाँ पर चारों तरफ 'विलायत' की रौशनी फैल जाती। जब खामोश रहते, तो एक अजीब समा बँध जाता। जब आत्म-ज्ञान की दीक्षा देते तो झर-झर रहमतों की बारिश होने से वहाँ उपस्थित दीक्षार्थीयों पर बे-खुदी छाने लगती। जब 'जमाल' में होते तो धरती से लेकर आकाश तक नूर की सुनहरी किरणों के आवागमन का सिलसिला चल पड़ता। जब 'जलाल' में होते तो धरती काँप उठती, आकाश थर्रा जाता, प्राणी दहल उठते, दर-व-दीवार दलक जाते, दरिया का पानी बलक उठता, पर्वतें दरक जातीं, बड़े-बड़े शक्तिमानों की शक्तियाँ क्षीण हो जाती, जब पैदल चलते तो इतने तेज कि बड़े बड़े द्रुतगमियों की चालें जवाब दे जातीं।

——

हक़ हक़ हक़

करामात

एक बार पर वाले शाह साहब का पटना में वकील साहब के घर पर हज़रत अख़्तर हुसैन उर्फ बेराग शाह के साथ जाना हुआ। यह समय शरद्-ऋतु का था। चूँकि ठण्ड ज्यादा पड़ रही थी, इसलिए आपने अख्तर शाह से फरमाया-'' ऐ अख़्तर तहज्जुद के वक्त वजू करने के लिए पानी गरम कर देना।'' आपके इस फरमाने पर उन्हें नींद न आई और करीब दो बजे रात्रि में पानी गरम करके अपने गुरू की सेवा में उपस्थित हुए, जहाँ आप विश्राम कर रहे थे परन्तु वहाँ पहुँचने पर उन्होंने देखा कि उनके गुरू (पर वाले शाह साहब) के शरीर का सभी अंग अलग-अलग और पृथक्-पृथक् हैं। वे यह आश्चर्यजनक दृश्य देखते ही भयभीत हो गए और शोर मचाया कि ''आपलोग जल्द आवें, न जाने हज़रत साहब (पर वाले शाह साहब) को किसी ने जान से मार डाला है।'' उनके इस आवाज पर घर के सभी लोग जग उठे और दौड़कर आए तथा इन्हें होश में लाये और इनसे कहा कि हज़रत पर ऐसी कैफ़ीयत बहुधा होती रहती है।

एक दिन आप(पर वाले शाह साहब)ख़ानक़ाह अमजदिया में असर की नमाज़ के बाद अपने हुजरा में विराजमान थे। चारो तरफ हरियाली छाई हुई थी। इस घड़ी दरियाए रहमत आवेश पर था। दोनों जहान की विलायत साक्षात तरंगित थीं। संयोग से इसी

मुग्धावस्था में शाह अख़्तर हुसैन ग्यावी का आपके सम्मुख गुजर हुआ । आपने अपने झुके हुए कृपा-दृष्टि को ऊपर उठाया और उन्हें देख-कर फरमाया ''मांग! क्या मांगता है?'' आपका यह कथन कहते ही वे (अख़्तर हुसैन गयावी)चिंता में डूब गए, परेशान हो उठे तथा असमंजस में घिर पड़े कि क्या मांगू-'दीन या दुनिया'। अन्ततः उन्हें कुछ न सूझ पाया और झट बोल पड़े- ''या हजरत! क्या मांगू? मुझे तो ये भी ज्ञात नहीं कि मैं तेरे दरबार में स्वीकृत हूँ या तिरस्कृत।'' उनके इस कथन के कहने पर आपने अपने जबान पाक से फ़रमाया- ''तुम स्वीकृत और तुम्हारी कुल चीजें स्वीकृत'' तत्पश्चात् आपने उन्हें 'बेराग' की उपाधि से विभूषित किया और उनसे कहा- ''इसका अर्थ समझे?'' वे मौन धारण कर लिये। कुछ देर बाद आपने उनसे फरमाया- ''इसका अर्थ है, जिसके सब राग हों और फिर कोई राग नहीं, यानी 'बा-राग' और 'बे-राग'।'' इसके बाद वे आपके पावन पैरों का बोसा लेने लगे।

आप (पर वाले शाह साहब) प्रतिवर्ष अवश्य एक बार बंगाल जिला दिनाजपुर ग्राम बहला की यात्रा किया करते थे, क्योंकि आपके आध्यात्मिक गुरू हज़रत सैयद शाह अमजद अली सुल्तान रंगीला क़द्दससिर्रहू का आदेश था- ''साल में कम से कम एक बार तुम मेरे शिष्यों और खलीफों को देख आया करना।'' सन 1928 ई० का समय था कि आप बंगाल की यात्रा के लिए प्रस्थान किये और कुछ दिन वहाँ रहने के उपरांत वापस बिहार(सीवान) लौट आए।

कहा जाता है कि वहाँ रहने के दरमियान आप (पर वाले

शाह साहब) बार-बार इस तथ्य को अपने ज़ुबाने पाक से दोहराया करते थे-''बहरे हक़ीक़त ख़ुश्क होने वाली है; जिसे सैराब होना है, सैराब हो ले (सत्यता का सागर शुष्क होने वाला है; जिसे संतृप्त होना है, संतृप्त हो ले)।''

समय गुज़रता गया और वह घड़ी सन्निकट आ पहुँची, जिसका आना अनादि-काल में तय था। यानी 15वीं शाबान 1347 हिजरी तदनुसार 27 जनवरी सन् 1929 ई० को दिन में दो बजकर बीस मिनट पर रहस्यवादी सरिता का वह तैराक, जो जीवन-तट को निष्ठा और प्रतिष्ठा प्रदान करता रहा, सत्यता के सागर में विलुप्त होकर निम्मतल की तरंग का रूप धारण कर लिया । इन्ना ल्लिलाहे व इन्ना एलैहे राजेऊन। लेकिन इस गुप्त रूप में भी अमरता के सहस्र झलक प्रकट हुए और ईश्वर ने चाहा तो क़यामत तक होते ही रहेंगे। आपके पवित्र शव को ख़ानक़ाह अमजदिया सीवान में आपके सद्गुरू (रंगीला पीर)के पुनीत चरणोंत्तर में दफन किया गया, जहाँ आपने अन्तिम साँसे ली थीं। पहले आपका रौजा खाम (कच्चा) था। लेकिन 1971 ई० में उसपर हकीम साहब (सैयद ख़ुर्शीद अली चिश्ती साबरी अमजदी) द्वारा एक खूबसूरत गुम्बद का निर्माण हुआ। आज आपका विश्राम-स्थल जनाकर्षण-केन्द्र है।

जग के पालन-कर्ता (परवर दिगारे आलम) ने अपने कृपा और दया से पर वाले शाह साहब की लाभप्रद ज़ात को फ़ैज़ का एक सागर बनाया था, जिससे हजारों लोग अपनी आत्मिक-तृष्णा दूर करते हैं। आपके पवित्र मजार शरीफ पर सच्चे दिल से उपस्थिति बेसहारों को सहारा प्रदान करता है, टूटे हुए दिलों को

संतोष की दौलत देता है, निराशों और असफलों को आशा और सफलता मिलती है तथा बेक़रारों को क़रार नसीब होता है। बहुत सारे लोग आपके मज़ारे पाक पर आकर श्रद्धा सुमन अर्पित करते हैं और मनौतियाँ मानते हैं, जिससे कार्य की सिद्धि होती है।

यों तो सृष्टि-कर्ता द्वारा रचित सभी जीवों की ओर हर पल आपकी दया-दृष्टि बनी रहती है, किन्तु आपके उर्स-ए-पाक की बरकतों, रहमतों और नवाजिशों का क्या कहना मालूम ऐसा होता है कि कृपा व दया की एक बारिश है, जो झर-झर,झर-झर, रिमझिम-रिमझिम बरस रही है और जिससे कोई भी उर्स-ए-पाक में आस्था और श्रद्धा के साथ सम्मिलित होने वाला वंचित नहीं रहता।

आपका उर्स पाक प्रतिवर्ष शबेबरात के दूसरे रोज दिन में दो बजकर बीस मिनट पर ख़ानक़ाह अमजदिया सीवान में हुआ करता है, जिसमें क़व्वाली भी होती है। सम्मिलित होने के लिए किसी को भी आमंत्रित नहीं किया जाता है। ऐलान भी नही किया जाता है और न ही इसके लिए विज्ञापन-पत्र छापी जाती है, जिसे इच्छा हो, निःसंकोच आ सकता है और सम्मिलित होकर फैज़े अमजदी से लाभान्वित हो सकता है।

———

हक़ हक़ हक़

ख़ानक़ाह अमजदिया सीवान के बड़े उर्स के पावन महोत्सव का सविस्तार वर्णन

ख़ानक़ाह अमजदिया, सीवान का छः दिवसीय बड़ा उर्स हिन्दी वर्ष के चैत महीना में हर साल हुआ करता है। यह उर्स हिन्दी की सत्ताईस चैत फ़सली से शुरू होकर दो बैसाख फ़सली और चाँद की ग्यारह तारीख़ से सोलह तारीख तक सतत् क्रमिक रूप से संचालित रहता है। इस उर्स में अप्रैल का महीना अवश्य शामिल रहता है।

यह बड़ा उर्स चाँद के किसी एक महीना में तीन वर्षों तक लगातार हुआ करता है। फिर चोथे साल अगले महीना में स्थांतरित कर जाता है और इस प्रकार हम देखते हैं कि यह उर्स चाँद के हर महीना में भ्रमण करता हुआ 36 वर्षों बाद फिर उसी महीना में पुनः वापस आ जाता है। तात्पर्य यह कि अगर बड़ा उर्स रमज़ान शरीफ़ के महीना में संचालित हो रहा है तो यह तीन वर्षों तक रमज़ान शरीफ़ के महीना में संचालित रहेगा। फिर चौथे साल शव्वाल के महीना में संचालित होना तय रहेगा बशर्ते ''दोमास'' न लगा हो।

उर्स का कार्यक्रम हर रोज़ रात्रि नौ बजे साहिबे सज्जादा के संरक्षण में प्रारम्भ होता है। इस उर्स की तैयारी डेढ़ माह पहले

ही शुरू कर दी जाती है। पूरे ख़ानक़ाह के चप्पे-चप्पे में सफेदी का काम इसी अवसर पर हर साल हुआ करता है और ख़ानक़ाह के दर-व-दीवार पर रंगो रौग़न का काम अक़ीदतमंदों को उर्स के आने की सूचना अपने ज़बान में दिया करती है।

ख़ानक़ाह अमजदिया के चैती उर्स की विशेषता है कि यह उर्स हज़रत सुल्तान रंगीला और हज़रत सुल्तान असद पर वाले शाह साहब के समय (1309 हि0/1892 ई0) से ही प्रचलित है और वे औलिया-ए-कराम इस उर्स को इन्हीं तारीखों में सम्पादित किया करते थे। उनके जीवन काल में ये उर्स जिस रीति से हुआ करता था। माशा अल्लाह आज भी उसी चमक-दमक के साथ जारी है और इन्शाअल्लाह! उसी रूप में होता रहेगा।

ग़ौरतलब है कि उस समय जो रस्में जिस तरह सम्पन्न होती थी, वैसी ही रस्में आज भी सम्पादित हुआ करती हैं। इन औलियाओं के निधन (विसाल) के पश्चात् उर्स की अंतिम दो तारीख़ों में दो रसूम 'चादर शरीफ़' और 'गुस्ल शरीफ' की वृद्धि कर दी गई है। आपको ज्ञात होना चाहिए कि यहाँ उर्स की हर एक तारीख़ किसी न किसी औलिया की नज़र व न्याज़ से संबन्धित है। उर्स का प्रोग्राम अलग-अलग तारीखों में निम्न प्रकार है-

चाँद की ग्यारह तारीख़ यानी शबे ग्यारह यानी 27 चैत (फातिहा):-

उर्स की यह तारीख़ पीराने पीर हज़रत सय्यद महीउद्दीन अब्दुल क़ादिर जीलानी (रह0 अ0) को समर्पित है।

शबे ग्यारह नौ बजे रात्रि-काल शीरीनी पर हज़रत ग़ौस पाक रह0 अ0 की फ़ातिहा दी जाती है। ये फ़ातिहा ख़ानक़ाह के

समा-ख़ाना में हुआ करती है, जिसमें साहिबे सज्जादा मौजूद रहते हैं। फ़ातिहा के बाद शीरीनी वितरित की जाती है।

चाँद की बारह तारीख यानी शबे बारह यानी 28 चैत (मीलाद शरीफ):-

उर्स की यह तारीख़ हज़रत मोहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को समर्पित है।

रात्रि नौ बजे समा-ख़ाना में मीलाद-शरीफ का आयोजन होता है। मीलाद-शरीफ खत्म होने के बाद शीरीनी सह मेवा वितरित की जाती है। फिर भोजन कराया जाता है।

चाँद की तेरह तारीख यानी शबे तेरह यानी 29 चैत (निशान शरीफ़):-

उर्स की यह तारीख़ हज़रत मौला अली करमुल्लाहु वजहु और मख़दुमुल आलम मख़दूम अलाउद्दीन अली अहमद साबिर कलयरी रहमतुल्लाह अलैहि को समर्पित है।

शबे तेरह होने वाले कार्यक्रम को हम तीन भागों में विभाजित करते हैं-

(i) सलाम की रस्मः- नौ बजे रात्रि-काल साहिबे सज्जादा अपने साथ क़व्वाल को बारी-बारी से सुल्तान रंगीला, सुल्तान असद और सुल्तान रशीद के रौज़े के भीतर सलामी देने के लिए ले जाते हैं, जहाँ क़व्वाल हर रौज़ा में सलाम की अलग-अलग विशेष गज़लों को थोड़े समय में पढ़ते हैं-

गज़ल

अस्सलामो अलइ-क मिन्नी व सलाती या रसूल
लैस ली हस्नुल अमल कैफन्नजाति या रसूल

मा अक़ूलु कइ-फ़ हाली हई-सु-ला यख़्फ़ा अलइ-क
अंतः तालम् मा मज़ा व मा सयाती या रसूल

इन्न फी हिजरिक अज़ाबन फी अजाबिल्ला युताक़
इन्न फी वस्लीक हयातन फी हयाती या रसूल

कुन्त कन्ज़न मखफियन फी कुन्तु कन्ज़म मखफिया
इख़्तिफाअन्नखल फी अइ-निन्नवाती या रसूल

अंतः जव्वादुन करीमन नह्नु क़उमुन साइलून
मिन् निसाबिल फज़्ले शइअन फ़िज़्ज़काती या रसूल

इशतरी ज़बनी बि अफ़्विक लइ-स ली फीहिल ख़ियार
बिअतो मिनक फिल् अज़्ले बैअलबयाती या रसूल

सल्लमल्लाहो अला रूहिक व सल्ले दाईमा
कुल्लु साआतिन्नहारी वल बयानी या रसूल

(हज़रत मो0 जमालुद्दीन बहजत फुलवारवी[रह0अ0])

चौपाई (रूबाई)

शाहा! जे करम बर मने दरवेशे निगर
बर हाले मने खस्तए-दिल रेशे निगर
हर चन्द नियम लाएके बख्शाइशे तू
दर मन-म-निगर दर क-र-मे खेश निगर

(हज़रत अबू सईद अबूल खैर रह0 अ0)

सलाम

सलाम उसपर कि जिसने बेकसों की दस्तगीरी की।
सलाम उसपर कि जिसने बादशाही में फ़क़ीरी की।।

सलाम उसपर कि असरारे मोहब्बत जिसने समझाए।
सलाम उसपर कि जिसने जख्म खाकर फूल बरसाए।।

सलाम उसपर कि जिसने खूँ के प्यासों को कबाएं दी।
सलाम उसपर कि जिसने गालियाँ सुनकर दुआएँ दी।।

सलाम उसपर कि जिसके घर न चाँदी थी न सोना था।
सलाम उसपर कि टूटी बोरिया जिसका बिछौना था।।

सलाम उसपर वतन के लोग जिसको तंग करते थे।
सलाम उसपर कि घर वाले भी जिससे जंग करते थे।।

(हज़रत माहेरूल क़ादरी रह0 अ0)

ग़ज़ल

मुफ्लेसाना आमदम दर कूए तू।
शैइन लिल्लाह! अज जमाले रूए तू।।
दस्त बकुशा जानिबे जम्बीलेमा।
आफरीं बर दस्त-व-बर बाजूए तू।।

(हज़रत अमीर खुशरू रह0 अ0)

ग़ज़ल

सबा! तू जाके बस इतना प्याम कह देना।
झुका के सर को बसद एहतराम कह देना।।
जो तूने देखी है हालत तमाम कह देना।
रसूले पाक से मेरा सलाम कह देना।।

(ii) निशान की रस्मः- निशान को नौ बजे से पहले यानी मगरिब की नमाज़ के बाद समा-ख़ाना के सहन में तैयार करके लंगर-ख़ाना के सहन में रख दिया जाता है।

इस निशान को बनाने के पहले तीन बार पाक पानी से बाँस को गुस्ल दी जाती है। ग़ुस्ल के बाद लंगोट चढ़ाया जाता है। यह लंगोट सफेद मारकीन के तीन मीटर टुकड़े को गुलाबी रंग से रंग कर तीन भाग में तैयार किया जाता है, जिसकी लम्बाई सत्ताईस फिट होती है। लंगोट को बाँस में दो जगह प्रारम्भिक तथा अंतिम स्थान पर सूई द्वारा सफेद धागे से मजबूत बाँध दिया जाता है; तब फरेरा लगाया जाता है।

इस निशान के फरेरा को ख़ास तरीक़ा से तैयार की जाती है। फरेरा दो रंग के पापलीन या सनफ्राई के कपड़ों द्वारा बनाया

जाता है। फरेरा डेढ़ मीटर लाल कपड़े से बनी होती है, जिसके किनारे चारों तरफ एक मीटर हरे कपड़े की एक पट्टी लगी रहती है। इस फरेरे की बनावट कुछ अलग होती है।

निशान पर खुशबू लगाई जाती है। फिर उसके शीर्ष पर फूलों की माला लपेटी जाती है। इस प्रकार ये निशान ''अलीफ'' का रूप धारण कर लेता है।

नोटः- सुल्तान रंगीला अधिकांश साढ़े पाँच मीटर बिना सिले हुए एकल कपड़े को इस प्रकार पहन लिया करते थे कि तीन मीटर कपड़े को नीचे बतौर तहबंद (लुंगी) बाँध लेते। डेढ़ मीटर कपड़े को शरीर पर रखते और एक मीटर कपड़ा से सर ढका रखते। निशान बनाने में इसी माप का इस्तेमाल किया जाता रहा है।

सलाम की रस्म के तुरंत बाद साहिबे सज्जादा लंगर-खाना के सहन में आ जाते हैं, जहाँ पहले से निशान को तैयार करके रखा गया होता है।

साहिबे सज्जादा निशान को लंगर-ख़ाना के सहन में अपने हाथ से इस्तादा (खड़ा) करते हैं। उसके आगे शीरीनी और लोहबान रखी जाती है। क़व्वाल साहिबे सज्जादा का आदेश पाकर पहले हम्द की कोई ग़ज़ल पढ़ते हैं फिर निशान की ग़ज़ल का पहला मिसरा जैसे ही पढ़ना शुरू करते हैं, साहिबे सज्जादा निशान को अक़ीदतमंदों के जन-सैलाब के साथ उठाए हुए आहिस्ता-आहिस्ता सुल्तान रंगीला के मजार-शरीफ पर ले जाते हैं, जहाँ निशान से सलामी लेने के लिए उनके रौज़ा पर बिल्कुल झुका दिया जाता है। फिर निशान को उठा कर निर्धारित स्थान पर नस्ब कर दिया जाता है और शीरीनी को सुल्तान रंगीला के रौज़ा के भीतर रख दिया जाता है।

ग़ज़ल

इस्तादा है अज़ल से क़ादिर निशान तेरा
और ता अबद रहेगा ज़ाहिर निशान तेरा

जो बा निशाँ बने थे उनके निशाँ है पीछे
आगे खड़ा है सबसे बढ़कर निशान तेरा

जूयाँ है जो निशाँ के उनको निशाँ बता दे
रखता है उनको हरदम मुज़्तर निशान तेरा

है तेरी अहदीयत पर हमको यक़ीन कामिल
इक दिन ज़रूर होगा घर-घर निशान तेरा

है अहदीयत नुमायाँ इसके अलिफ से बेशक
देता तेरी खबर है मुख़बिर निशान तेरा

फिर क्या ग़रज 'असद' को दैर-व-हरम से शाहा!
जब है वजूद उसका बरतर निशान तेरा

निशान की रस्म देखने लायक होती है। मेरे विचार से निशान की ये रस्म ख़ानक़ाह अमजदिया की अपनी खास रस्म है, जिसे इसके अलावह और कहीं देखने या सुनने में नहीं आई है। लेकिन इस ख़ानक़ाह की जितनी शाखाएँ वजूद में हैं वहाँ उर्स की शुरूआत इसी रस्म से की जाती है। कई ख़ानक़ाहों में यह

निशान गश्त भी कराई जाती है और गश्त के पीछे सुल्तान असद के इस शेर का हवाला दिया जाता है।

है तेरी अहदीयत पर हमको यकीने कामिल
एक दिन जरूर होगा, घर-घर निशान तेरा

बाबा खलील अहमद चिश्ती साबरी अमजदी (हज़रत सैयद तसद्दुक़ अली असद पर वाले शाह साहब के मुरीद-व-ख़लीफ़ा) ने भी निशान के लिए एक गज़ल लिखी थी, जो महफ़ूज़ है—

गज़ल

हर ज़र्रा ज़र्रा से है ज़ाहिर निशान तेरा
हर सू मैं देखता हूँ हाज़िर निशान तेरा

जिनको मिली बसीरत रब्बा तेरी तरफ से
वो देखते हैं हर जा वाफ़िर निशान तेरा

दैर-व-हरम में तू है इस्लाम-व-कुफ्र तेरा
मुस्लिम से तू अयाँ है काफिर निशान तेरा

मौला निशान कैसा हर जा तू ही नुमायाँ
कहता हूँ सिर्फ दिल की खातिर निशान तेरा

इल्म-व-ख़िरद से अपनी जब होगई रिहाई
उस वक़्त असद को समझा नासिर निशान तेरा

की जुस्तुजू बहुत कुछ लेकिन मिला न कोई
महले बक़ा का पाया आमिर निशान तेरा

किस वास्ते भला फिर दर दर की ख़ाक छानूँ
जब है 'ख़लील' हक़्क़ा ज़ाहिर निशान तेरा

(iii) महफिले समाः- निशान के नस्ब होने के बाद साहिबे सज्जादा समा-ख़ाना में आकर अपने निर्धारित स्थान पर विराजमान होते हैं और महफिले समा की पहली बैठक की शुरूआत होती है।

समा(कव्वाली) माइक से होती है और सदरे महफिल साहिबे सज्जादा होते हैं जिन्हें नजर (रूपये) पेश की जाती है। दस रूपये से कम नज़र पेश करना मुनासिब नहीं है। ये सारी नज़र कव्वाल के हवाले कर दी जाती है। महफिले समा के बाद श्रद्धालुओं के लिए सादा (शाकाहारी) भोजन का प्रबंध रहता है।

चाँद की चौदह तारीख या शबे चौदहवी यानी 30 चैत (गागर शरीफ़):-

उर्स की यह तारीख़ ख़्वाजा-ए-ख़्वाजगान हज़रत ख़्वाजा मोईनुद्दीन हसन चिश्ती संजरी रह0अ0 और हज़रत ख़्वाजा क़ुतबुद्दीन बख़्तियार काकी रह0अ0 को समर्पित है।

शबे चौदह ख़ानक़ाह का रोचक दृश्य देखने योग्य होती है। मग़रिब की नमाज अदा होते ही शहर के अलग-अलग मुहल्लों और टोलों से लोग जोक़-दर-जोक़ अपने अपने सरों पर मन्नत की गागरें रखकर जुलूस की शक्ल में क़व्वाल की टोलियों

के साथ ख़ानक़ाह की तरफ आने का सिलसिला शुरू कर देते हैं, जो देर रात तक जारी रहता है। कुल गागरों को समा-ख़ाना में रखा जाता है। जब कुल गागरें आ जाती हैं तब उसपर फातिहा दी जाती है और फिर उसे वहाँ से उठाकर उचित स्थान पर रख दिया जाता है। एक श्रद्धालू अपने अधीन जितनी भी गागरें ख़ानक़ाह में भर कर लाते हैं। दूसरे दिन उन्हें दस्तूर के मुताबिक एक गागर खानक़ाह की तरफ से दे दी जाती है।

गागर और संदल की रस्मः- आस्ताना की गागरें और संदल लंगर-खाना के सहन से उठा करती हैं। साहिबे सज्जादा क़व्वाल के साथ पहले हम्द फिर गागर और संदल की गज़लें पढ़वाते हुए समा-ख़ाना तक लाते हैं।

गीत

भरदे भरा दे ख्वाजा मोरी पीतम की गागरिया
पीतम की गागरिया ख्वाजा प्रेम की गागरिया
भर दे भरा दे सर पे उठा दे
बहीयाँ थाम के मोरी बता दे डगरिया
गागरिया भर के मोरी रंग दे चुनरिया
झम-झम करत जाए धनी अपनी ससुरलिया
पैय्याँ परत हूँ विनती करत हूँ
जाँ में रहे लाज मोरी पीतम की गागरिया
मुजतर का कोई नहीं सेवा तेरे
तब काहे न लेत वा की खबरिया

(मुज़्तर)

भैरवी

गोइयाँ गोइयाँ पनिया न जा पिऊँ राम
वा के कुआँ की ऊँची जगत है, मो से चढ़ा न जाए
संग की सहेली निकल गयीं सब, मैं ठारी पछताऊँ
भारी गगर सर संभलत नाही
लचकी लचकी बल खाऊँ
'रंगीला' कहीं पर हो आस कुतुब की
मैं काहे पछताऊँ

यह संगीत एक बार प्रातः काल हज़रत सुल्तान रंगीला की ज़ुबान से हालते बेख़ुदी में निकली थी, जिसे मुरीदों ने काग़ज़ पर लिख लिया था। यह संगीत पर वाले शाह साहब के समय पनभराव की रस्म में पढ़ी जाती थी जो अब अधिकांशतः गागर की महफिल में पढ़ा जाता है।

जब इस संगीत को आस्ताना के क़व्वाल अनवर बलरामपुरी मधुर राग व लय में गाते हैं तो एक रंग पैदा हो जाता है और मेरे पीरो मुर्शिद को हाल आ जाता है।

ग़ज़ल

ले चलीं आज सखी ख्वाजा के दर पर गागर
एक को सर पे रखी एक कमर पर गागर

बाख़ुशू और ख़ुज़ू आबे मोहब्बत से भरूँ
शौक़े वहदत में चलूँ सर पे उठा कर गागर

क़न्द इख़लास घुली केवड़ा-ए-इज्ज़ पड़ा
एक से एक बनी बेहतर व बरतर गागर

आतिशे इश्क से जब है ये मेरा दिल रौशन
जामे जम से न हो क्यों अपनी फ़ुज़ूँतर गागर

(बाबा खलील अहमद चिश्ती साबरी अमजदी रहमतुल्लाह अ़लैह)

ग़ज़ल

ख्वाजा-ए-ख्वाजगाँ की गागर है
वाली-ए-चिश्तियाँ की गागर है

ले चलो एहतेराम से सर पर
हामी-ए-बेकसाँ की गागर है

केवड़ा इसमें पड़ा अक़ीदत का
अज़्मत-ए-आरिफाँ की गागर है

इसमें है एतबारे दिल की मिठास
ख़ुश जुबाँ ख़ुश बयाँ की गागर है

बा-अदब इल्तेफ़ात सर पे रखो
अमजदी आस्ताँ की गागर है

(इल्तेफ़ातुल औलिया इल्तेफ़ात अमजदी उर्फ़ नौशा मियाँ)

ग़ज़ल

चल सखी चिश्ती नगर सर पे उठा के गागर
जामे तौहीद से लाया हूँ भरा के गागर

इसकी तरकीब में हैं चार अनासिर शामिल
शक्ले इंसा को उतारा है बना के गागर

वज्द में कुचा-ए-जानाँ की तरफ बढ़ते चलो
आँख से चूमते सीने से लगा के गागर

अपने मुर्शिद का करम भूल नहीं सकता मैं
नाज तकदीर पे करता हूँ मैं पा के गागर

क़ीमती चीज है लाज़िम है हिफ़ाज़त इसकी
दिल को मौजूद ने रक्खा है बना के गागर

(मौजूद चिश्ती)

संदल

चल सखी सर पे लिए ख्वाजा का प्यारा संदल
दोनों आलम में है मशहूर अनोखा संदल

मुश्क व अम्बर को मिलाकर इसे सखियों ने तेरी
तश्ते उल्फत में अक़ीदत से सजाया संदल

चाँद तारों की तरह हो गए चेहरे रौशन
जिन्न-व-इंसा ने जबीं पर जो लगाया संदल

यह शिफ़ा बख़्श है बीमारे ज़माना के लिए
हर मरज़ के लिए अकसीर है तेरा संदल

अहले दिल, अहले नजर सबने दुआ दी उसको
सर पे 'मौजूद' ने बढ़कर जो उठाया संदल

(मौजूद चिश्ती)

चूँकि लंगर-ख़ाना के सहन से समा-ख़ाना की दूरी बहुत कम है। इस लिए क़व्वाल को ज्यादा गजलें पढ़ने का मौका नहीं मिल पाता है। लेकिन तबर्रूक आहिस्ता-आहिस्ता हर रौज़ा के

सामने रूकता हुआ ठहरता हुआ समा-ख़ाना तक पहुँचता है। समा-ख़ाना में आस्ताना की गागरें और संदल क्रमबद्ध तरीक़े से रख दी जाती हैं। फिर उसपर फ़ातिहा दी जाती है। फ़ातिहा के बाद ये गागरें सुल्तान रंगीला के रौज़ा के भीतर रख दी जाती हैं। तत्पश्चात् महफिले समा का सिलसिला शुरू होता है। इस रोज़ क़व्वालों की संख्या दर्जन से भी अधिक होती है; परन्तु सभी क़व्वालों को पढ़ने का मौक़ा ज़रूर दिया जाता है।

महफिले समा के दौरान संदल लोगों के सामने पेश किया जाता है और लोग उसे तबर्रूक (प्रसाद) के रूप में अपनी शहादत की उंगली से पेशानियों पर लगाते हैं। तत्पश्चात संदल रौज़ा-ए-अमजदी में रख दी जाती है। फिर मजलिसे समा के दौरान शर्बत चाय और पप्पा बिस्कुट तकसीम हुआ करती है। महफिले-समा के समाप्त होने के पश्चात लंगर के रूप में हलवा और रोटी तकसीम किया जाता है।

चाँद की पन्द्रह तारीख या शबे पन्द्रह या एक बैसाख (चादर शरीफ):- उर्स की यह तारीख हज़रत सय्यद शाह अमजद अली सुल्तान रंगीला क़द्दससिर्रहू से संबंधित है।

यह उर्स की विशेष तारीखों में भी विशेष तारीख है, जिसका विशेष प्रबंध किया जाता है। यह तारीख़ सुल्तान रंगीला के विसाल (ब्रह्मलीनता) से सम्बंध रखता है। सुल्तान रंगीला के विसाल की तारीख पन्द्रह रबीउस्सानी 1328 हिजरी तदनुसार 25 अप्रैल 1910 ई0 तदनुसार एक बैसाख है। आप उर्स के दौरान इसी तारीख में पर्दा फरमा गए थे।

उर्स की इस तारीख को समा-ख़ाना में उम्दा (उत्कृष्ट) फर्श बिछायी जाती है। फर्श के रूप में कालीन (कारपेट) और जाज़िम बिछायी जाती है। हजरत सुल्तान रंगीला से मंसूब मसनद भी बिछती है। महफिले समा के समापन के पश्चात उत्कृष्ट लंगर की व्यवस्था रहती है।

चादर की रस्मः- रात्रि नौ बजे लंगर-ख़ाना के सहन से सरकारी चादर उठती है। साहिबे सज्जादा कव्वाल के साथ हम्दीया और मुनाजाती गज़ल पढ़वाते हुए सुल्तान रंगीला के रौज़ा के भीतर ले जाते हैं और मज़ार शरीफ़ पर चादर पेश करते हैं।

प्रायः जिस ग़ज़ल के पढ़ने पर चादर सर पर उठाई जाती है, वो ग़ज़ल मैंने क़व्वाल से नोट कर ली है-

ग़ज़ल

तबर्रूक सर पे लो ऐसे वली का
के जन्नत नाम है जिसकी गली का

ये आला मर्तबा है इस वली का
नबी का लाडला प्यारा अली का

मैं भूलूँ नामे मुर्शिद दिल से क्योंकर
ये तो नक़्श है नादे अली का

(अज्ञात शायर)

इसके पश्चात अक्सर फर्द फुलवारवी रह0 अ0 और हाफ़िज़ शीराज़ी की वो फारसी गजलें पढ़ी जाती रही हैं जिनके एक एक मिसरे स्मरण में आ रहे हैं-

" ऐ खाक-ए-दरगहे तू जबीने न्याजे मा"

(हज़रत फर्द फुलवारवी रह0अ0)

" ऐ खुसरू-ए-खूबाँ! नज़रे सूए गदा कुन"

(हज़रत हाफिज़ शीराज़ी रह0अ0)

रौज़ा के भीतर चादर पेश करते समय क़व्वाल सुल्तान असद क़द्दससिर्रहू की लिखी हुई खास ग़ज़ल को पढ़ता है-

ग़ज़ल

हक़ ने अहमद को मुज़म्मिल की ओढ़ाई चादर
इतरे कुर्बत से है क्या खूब बसाई चादर

तेरी सखियों ने इसे तारे नफ़स से बुनकर
आज किस धूम से रौज़े पे चढ़ाई चादर

सोज़ने शौक़ में अब डालके ये रिश्त-ए-जाँ
हमने खय्याते मोहब्बत से सिलाई चादर

कोई रंग चढ़ता नहीं, रंगे शहादत के सिवा
अपने ही खून में आखिर ये रंगाई चादर

ये रिदा अहमदे मुर्सल से अली को पहुँची
ऐब पोशी के लिए ख़ल्क़ मे आई चादर

अब तो तू चश्मे इनायत से इसे करले क़बूल
नेस्ती की तेरी दरगाह में आई चादर

बे निशानी के न क्यों इसपे मुनक़्क़श हों नुक़ूश
नक़्दे जाँ दे के 'असद' हमने छपाई चादर

(सुल्तान असद)

नोटः- चादर की इस गज़ल में बारह अशआर हैं लेकिन सिर्फ पाँच अशआर ही पढ़े जाते हैं। मकता नहीं पढ़ा जाता था लेकिन मेरे इसरार पर अब मकता पढ़ा जाने लगा है।

चादर की रस्म के तुरन्त बाद समा-ख़ाना में मजलिसे समा शुरू हो जाती है, जिसका रंग बिल्कुल जुदा होता है। महफिले समा में सुल्तान रंगीला की शान में गज़लें पढ़ी जाती हैं।

चाँद की सोलह तारीख यानी शबे सोलह यानी 2 बैसाख (चादर शरीफ):- उर्स की यह तारीख़ हज़रत सय्यद शाह तसद्दुक़ अली सुल्तान असद तेज़ रफ़्तार इमामुल औलिया क़द्दससिर्रहू उर्फ पर वाले शाह साहब से संबंधित है।

सुल्तान असद के विसाल की तारीख भी पन्द्रह है। फर्क बस यह है कि सुल्तान रंगीला के विसाल का समय दो बजे रात्रि है, जबकि सुल्तान असद के विसाल का समय दो बजे दिन है।

यह उर्स की अंतिम तारीख है। कार्यक्रम नौ बजे रात्रि से शुरू होकर सूर्योदय के पश्चात समाप्त हो जाता है।

चादर की रस्मः- नौ बजे रात्रि काल लंगर-ख़ाना के सहन से साहिबे सज्जादा कव्वाल के साथ हम्दीया और मोनाजाती ग़ज़ल पढ़वाते हुए सुल्तान असद के रौज़ा के भीतर ले जाते हैं और उनके मज़ार शरीफ पर चादर पेश करते हैं।

सुल्तान असद के मज़ार शरीफ पर चादर पोशी के पश्चात साहिबे सज्जादा पुनः लंगर-खाना के सहन से क़व्वाल के साथ हम्दीया और मोनाजाती ग़ज़ल पढ़वाते हुए मेरे दादा पीर हज़रत सुल्तान रशीद सय्यद शाह हकीम खुर्शीद अली चिश्ती साबरी अमजदी क़द्दससिर्रहू के रौज़ा के भीतर ले जाते हैं और चादर पेश करते हैं।

ग़ज़ल

शाह अमजद अली की चादर है
एक ज़िन्दा वली की चादर है

क्यों मोअत्तर न हो हर एक गोशा
चमने हक़ के कली की चादर है

ज़र्रा ज़र्रा है जिसका रश्के जनाँ
उसी तैबा गली की चादर है

जिससे लफ़्ज़ों में रौशनी आई
उसी हर्फ़े जली की चादर है

ऐसी चादर कहीं नहीं देखी
ऐतबारे वली की चादर है

सब की मुश्किल करेगी ये आसाँ
आशिकाने अली की चादर है

बा-अदब इल्तेफात सर पे लो
बरगज़ीदा वली की चादर है

(इल्तेफ़ातुल औलिया इल्तेफ़ात अमजदी उर्फ़ नौशा मियाँ)

ग़ज़ल

आशिके मुस्तफा की चादर है
सय्यदुल औलिया की चादर है

सर पे रखकर चलो करीने से
नाज़िशे औलिया की चादर है

ऐ सितारो करो सलाम इसको
माहताबे विला की चादर है

जिसके सर पर है दस्ते शेरे ख़ुदा
उस वली की अता की चादर है

क्यों न आसानियाँ रहें हासिल
मेरे मुश्किल कुशा की चादर है

इल्तेफात इसको चूम पलकों से
सबके हाजत रवा की चादर है

(इल्तेफ़ातुल औलिया इल्तेफ़ात अमजदी उर्फ़ नौशा मियाँ)

ग़ज़ल

मुर्शिदे बावफ़ा की चादर है
ये रंगीला पिया की चादर है

नाम पर जिसके दिल मचलता है
ये उसी दिलरूबा की चादर है

हर वली क्यों न वज्द में आए
सय्यदुल औलिया की चादर है

सूफिया-ए-जमाँ हैं इसपे निसार
कुदवतुल अस्फिया की चादर है

मुर्तजा को ये मुस्तफा से मिली
ये ख़ुदा की अता की चादर है

हाजतें क्यों न पूरी हों मेरी
सबके हाजत रवा की चादर है

आज मौजूद सबसे यह कह दे
ये मेरे पेशवा की चादर है

ग़ज़ल

मुर्शिदे बावक़ार की चादर
मोनिसो ग़मगुसार की चादर

क्यों न चूमूँ मैं इसको आँखों से
ये है नूरी मज़ार की चादर

मुस्तफा ने पसन्द फ़रमाई
फ़ातिमा बी के प्यार की चादर

ये ख़ता बख़्श है बशर के लिए
है नबी के दयार की चादर

देख कर इसको बोल उठ्ठे सब
ये तो है मेरे यार की चादर

दिल से कर लीजिए क़बूल इसे
यह है इक जाँ निसार की चादर

सर पे मौजूद रख के लाया है
अमजदी ताजदार की चादर

(मौजूद चिश्ती)

ग़ज़ल

कछू झिलमिल झिलमिल होवत है, वो ओढ़ चुन्दरिया सोवत है
पिया गंजेशकर के रूप में महबूब प्यारा सोवत है

बेसूरत की एक मूरत है वा मूरत में एक सूरत है
चुप ठार रहूँ कुछ कह न सकूँ, वो ओढ़ चुंदरिया सोवत है

इस ग़ज़ल में दो शेर मैंने अपनी तरफ से बढ़ा दिए हैं-

हैं तारे सभी इस के दर पर, इन तारों से है धरती रौशन
आ देख यहाँ की धरती पर, रहमत का चंदा सोवत है

आँखे उसकी नूरे रहमत, चेहरा उसका रंगे हैरत
ये उन लम्हों में जागत है, जब सारी दुनिया सोवत है

चादर की रस्म के तुरंत बाद समा-ख़ाना में मजलिसे समा का आयोजन होता है। ये समा रात्रि दो बजे के पूर्व समाप्त कर दी जाती है। तत्पश्चात लंगर के रूप में क़बूली की व्यवस्था रहती है।

फातिहा सेहरा चिश्त अहले बहिश्तः-

यह मजलिस महफिले खास के नाम से जानी जाती है। दो बजे रात्रि-काल फ़ातिहा सेहरा का आयोजन होता है,जिसमें साहिबे सज्जादा मौखिक शजरा पढ़ा करते हैं। इस महफिले समा में सिर्फ ख़ानक़ाही कव्वाल ही ग़ज़ल पढ़ते हैं। ये महफिले समा ख़ानक़ाह के समा-ख़ाना में न होकर हमेशा से ख़ानक़ाह के दक्षिण मस्जिद की दीवार से सटे बरामदा में हुआ करती है और देखने से तअल्लुक़ रखती है। यह समा फ़जर की अज़ान से पूर्व

बन्द करा दी जाती है।

गुस्ल की रस्मः- फ़ज्र की नमाज़ के बाद ये रस्म सम्पन्न की जाती है। ये ख़ानक़ाह के उर्स में होने वाली आखरी रस्म है।

साहिबे सज्जादा कव्वाल के साथ सबसे पहले हज़रत सुल्तान रंगीला के रौज़ा के भीतर जाकर मजार शरीफ को गुस्ल देते हैं। तत्पश्चात् सुल्तान असद, सुल्तान रशीद के मज़ारात की बारी-बारी गुस्ल देते हैं। गुस्ल के वक्त कव्वाल हर रौज़े के भीतर एक ही खास ग़ज़ल को बार-बार पढ़ते हैं, जिसमें सिर्फ दो अशआर हैं-

ब्या साकी के मन मुरदम कफन अज बर्गे ताकम कुन
''ऐ साकी! आओ मैं मुरदा हूँ, मूझे अंगूर के पत्ता का कफन दो।''
ब आबे मए बदह गुस्लम दरीं मैखाना खाकम कुन
''मुझे शराब के पानी से गुस्ल दो और उस मैखाना में मुझे दफन करो।''
ब कुल फ़ातेह बदह रूहम दरीं गोरम अजीं तर कुन
''फातेहे कुल से मेरी रूह को इस कब्र में तर करदो।''
ब रोजे आक़बत मा रा ब यक जुरआ निजातम कुन
''और आख़िरत के दिन हमको शराब के एक घोंट से निजात दो।''

गुस्ल की रस्म के पश्चात साहिबे सज्जादा समा-ख़ाना में आकर अपने निर्धारित स्थान पर तशरीफ रखते हैं और महफिले समा की अंतिम बैठक की शुरूआत होती है। इस महफिले समा का समापन सलाम की किसी ग़ज़ल पर होती है। महफिले समा के बाद क़ुलशरीफ़ पर उर्स का समापन कर दिया जाता है और इस प्रकार हम देखते हैं कि उर्स कुल शरीफ से शुरू होकर कुल शरीफ पर खत्म होती है और समा सलाम से शुरू होकर सलाम पर खत्म होती है।

उर्स खत्म होते ही आगामी उर्स के देखने की ख्वाहिश दिल में उमड़ पड़ती है।

हक़ हक़ हक़

नात शरीफ

(जनाब ज़ाकिर साहब की पूरवी भाषा में नात)

का तुम से कहूँ ऐ रब के कुँवर तुम जानत हो मन की बतियाँ।
दरे फ़ुर्क़त तू ऐ उम्मी लक़ब काटे न कटत है अब रतियाँ।।

अलबेली अदाओं ने मोह लिया मतवाली निगाहों ने दिल छीना।
बेताब शुदम दर हिज्रे शुमा लिल्लाह लगा लो अब छतियाँ।।

दर शाने शुमा लौ-ला-क-लमा फ़र्मूदे ख़ुदा ख़ुद दर क़ुरआँ।
वश्शम्स है मुख वल्लैल मुकुट मन मोहे न क्यों तोहरी अंखियाँ।।

तोरे प्रीत में सुध बुध सब बिसरी कब तक रहेगी ये बेखबरी।
गाहे ब-फ़िगन दुज़दीदा नज़र, कभी सुन भी तो लो हमरी बतियाँ।।

क्या दिलकश है तोहरी डगरी दिल छीनत है बतहा नगरी।
ज़ाकिर चे कुनम गुलज़ार-ए-जनाँ मुझे भा गईं यसरब की गलियाँ।।

नातिया रूबाई

बंदा को निगाहे लुत्फ़े मौला बस है
हज़रत का मेरे लिए वसीला बस है
मैं मुश्ते गुबार हूँ सहारा मुझको
दामाने रसूले मुस्तफ़ा का बस है

(मोहसिन काकोरवी)

हक़ हक़ हक़

कलामे खुसरू

ज़े हाल-ए-मिस्कीं मकुन तग़ाफ़ुल, दुराय नैनाँ बनाए बतियाँ।
कि ताब-ए-हिज़्राँ न-दारम ऐ जाँ न लेहू काहे लगाए छतियाँ।।

शबान-ए-हिज़्राँ दराज चूँ ज़ुल्फ़-ओ रोज़-ए-वस्लत चूँ उम्र-ए- कोतह।
सखी पिया को जो मैं न देखूँ तो कैसे काटूँ अँधेरी रतियाँ।।

यकायक अज़ दिल दो चश्म-ए-जादू बसद फरेबम ब-बुर्द तस्कीं।
किसे पड़ी है जो जा सुनावे पियारे पी को हमारी बतियाँ।।

चूँ शम-ए-सोजाँ चूँ ज़र्रा हैराँ ज़े-मेहर-ए-आँ मह ब-गशतम आखिर।
न नींद नैनाँ न अंग चैनाँ न आप आवे न भेजे पतियाँ।।

ब-हक्क़-ए-आँ मह कि रोज़-ए-महशर ब-दाद मा रा फ़रेब खुसरौ।
सपीत मन के दुराय राखूँ जो जाए पाऊँ पिया की खतियाँ।।

गीत

बहुत कठिन है डगर पनघट की।
कैसे मैं भर लाऊँ मधवा से मटकी।।

पनिया भरन को मैं जो गई थी।
दौड़ झपट मोरी मटकी पटकी

बहुत कठिन है डगर पनघट की।
'खुसरौ' निजाम के बल-बल जइए।।

लाज रखो मेरे घूँघट पट की।
कैसे मैं भर लाऊँ मधवा से मटकी।।

हक़ हक़ हक़

कलामे भीका

गुर दर्शन भगवान का दर्शन सिफत में ज़ात समाई रे।
गुर बिन ज्ञान नहीं भाई साधो गुर ने बात बताई रे।।

गुर ईश्वर में फ़र्क न जानो ईश्वर का ऐन ही जानो।
गुर सूरत भगवान की सूरत गुर पहचान कराई रे।।

हरदम ध्यान-गुरू में रहना सर को रखना चरणों में।
गुर कृपा का पीकर अमृत क़ल्ब की होवे सफाई रे।।

सब संतन का यही कहना, हो के गुरू के रहना रे।
हो के रहे जो गुरू का सेवत भक्ति उसने पाई रे।

गुर का जाप जपे जा हरदम राम जपे फिर जाप तोरा।
करता जा गुरू की पूजा पूजे तोहे खुदाई रे।।

'भीका' भजन गुरू के गाईए गुर राज़ी सब राजी रे।
गुर रूठे नहीं ठोर जगत में रूठे सभी खुदाई रे।।

(हज़रत सैयद मीरान भीक रहमतुल्लाह अलैह)

हक़ हक़ हक़

मनक़बत

अब अपना दे जल्वा दिखा या शाह मस्त अमजद अली
मुश्ताक़ हूँ कब से तेरा या शाह मस्त अमजद अली
तू ज़ात में लाज़ात है और है मकाँ में लामकाँ
लेकिन निशाँ है जा-ब-जा या शाह मस्त अमजद अली
सिर्रे मुहम्मद मुस्तफा चौदह सदी मे आके अब
आलम पे ज़ाहिर कर दिया या शाह मस्त अमजद अली
कर रहम की मुझपर नज़रा मैं ग़मज़दा कब तक रहूँ
मुद्दत से हूँ दर पर पड़ा या शाह मस्त अमजद अली
तेरे सिवा तू ही बता है कौन मेरा दस्तगीर
है तू ही तो मौला मेरा या शाह मस्त अमजद अली
ऐ मसदरे जूद-ओ-करम ऐ मजहरे फ़ैज़े अतम
अब खोल दे बाबे सख़ा या शाह मस्त अमजद अली
मेरी तमन्ना है यही मक़बूल कर ले मुझको तू
महरूम मत दर से फिरा या शाह मस्त अमजद अली
सुल्ताँ असद ख़स्ता जिगर है मुज़्तरिब शाम-ओ-सेहर
अब कर फ़ना में बा बका या शाह मस्त अमजद अली

(हज़रत सुल्तान असद)

मनक़बत

रहमत का शामियाना अमजद का आस्ताना
वलियों का आशियाना अमजद का आस्ताना
कह दो ये आरिफ़ों से कह दो यह आशिक़ों से
है इश्क का ख़ज़ाना अमजद का आस्ताना

पीकर शराब जिसकी सूफ़ी हुए हैं कितने
है वो शराबख़ाना अमजद का आस्ताना
इस दर के जो गदा हैं इस दर पे जो फ़िदा हैं
उनका है ये तराना अमजद का आस्ताना
ऐ इल्तिफ़ात तुमको सब कुछ यहीं मिलेगा
दुनिया में है यगाना अमजद का आस्ताना

नाज़-ओ-नियाज़ से है अयाँ अमजदी का रंग
इक बेज़ुबाँ से क्या हो बयाँ अमजदी का रंग
इस ख़ानकाहे अमजदी के गुल्सिताँ में है
हर फूल हर कली में नेहाँ अमजदी का रंग
दर दर भटक रहा है कहाँ ऐ दिले हज़ी
तुझको मिलेगा और कहाँ अमजदी का रंग
अपने लिबासे इश्क़ को रंगने के वास्ते
मांगे न कैसे सारा जहाँ अमजदी का रंग
जिसको यक़ीं न आए वो आकर तो देख ले
है रूए दिलबरी से अयाँ अमजदी का रंग
हो इल्तिफ़ात पर जो कभी चश्मे इल्तिफ़ात
हो जाए अपना नाम-वो-निशाँ अमजदी का रंग

तू रजवाए राज रंगीला
मैं भी हूँ मोहताज रंगीला

तोहरी बिरह में कब तक तड़पूँ
आ जा ऐ सरताज रंगीला

परजा को काहे चिंता
जब उसके महराज रंगीला

तोहरी डगर के कांकर पाथर
नीलम और पोखराज रंगीला

मोरी चुनर कब घानी होई
रंग दे एकरा आज रंगीला

तोरे नाम की माला जपत हूँ
इहे मोरा अब काज रंगीला

सुध बुध सारा लूट गयो
मनमोहक अंदाज रंगीला

पय्याँ सर पर रख दो स्वामी
ओहे मोरा ताज रंगीला

केहू ना हमरा तोहरे बिना
तोहरे पे हमरा नाज रंगीला

शीश नवाए आया 'नौशा'
रखयो इसकी लाज रंगीला

(इल्तिफ़ातुल औलिया डॉ0 सैयद इल्तिफ़ात अहमद अमजदी उर्फ नौशा मियाँ)

मनक़बत

है लक़ब तेरा रंगीला हक़ का तू मतलूब है
हर अदा तेरी जहाँ को आज भी महबूब है
अच्छा को अच्छा कहें सब यह तअज्जुबख़ेज़ है
तेरा वो दर है जहाँ बदकार भी मरग़ूब है

ज़माने में अफ़ज़ल हमारा रंगीला
वलियों में सबसे निराला रंगीला
कमाल-ओ-सिफ़त में यगाना रंगीला
अदाओं में सबसे निराला रंगीला
कभी है तक़्दुस की जमुना रंगीला
कभी है हिदायत की गंगा रंगीला
तू सुब्हे बनारस तू शामे अवध है
नज़ारा है तेरा सुहाना रंगीला
कभी जगमगाता हुआ चाँद है तू
कभी जगमगाता सितारा रंगीला
तेरी ज़ाते अक़्दस का क्या पूछाना है
रंगीला हमेशा हमेशा रंगीला
तेरे रंग में सारी दुनिया ढली है
रंगीला छबीला छबीला रंगीला
मेरे लब पर शाम-ओ-सेहर ये सदा है
रंगीला हमारा हमारा रंगीला
तेरे नाम की रट मेरा मशग़ला है
रंगीला वज़ीफा वज़ीफा रंगीला
भरूँ दम मैं ईसा व मूसा का कैसे
जहाँ में है मेरा मसीहा रंगीला
हर इक रूप में तू नज़र आ रहा है
शिवाला रंगीला कलीसा रंगीला
हिदायत का मख़ज़न है मेरे लिए तू
तू क़ुरआन है तू है गीता रंगीला

सिवा तेरे है कौन मेरा सहारा
हमारा सहारा हमारा रंगीला
लगा देगा तू पार बेड़ा हमारा
तेरी ज़ात पर है भरोसा रंगीला
रंगीला किरण है मेरी आरज़ू की
मेरी शामे ग़म का सवेरा रंगीला
हमें हर क़दम पर ज़रूरत तेरी है
तेरे बिन कठिन है गुज़ारा रंगीला
दरे अमजदी पर खड़ा ये गदा है
करम इस भिखारी पे करना रंगीला
सदा ये ज़ुबाँ पर रहे वक़्ते रूख़्सत
रंगीला रंगीला रंगीला रंगीला
गुनहगार मौजूद चिश्ती न भटके
पता राहे हक़ का दिखाना रंगीला

तेरा इस्मे पाक अमजद तू अताए एज़दी है
तेरी ज़ात सरमदी है तेरी शान अहमदी है
भला कौन इस जहाँ में करे हमसरी का दावा
तेरा फ़ैज़ बहरे रहमत तेरी ज़ात एक सदी है

(मौजूद)

मनक़बत

सय्यदी अमजद अली शाने तरीक़त आपकी
विर्दे हक़ हक़ हक़ में जल्वा-गर है अज़्मत आपकी
कौन जाने इल्मे हक में क्या है वुसअत आप की
आप जाने हक़ का हक़ और हक़ हक़ीकत आपकी
ले गया मंज़िल ब मंज़िल किस बुलंदी पर सुलूक
फ़र्श ने क्या अर्श ने देखी है रिफ़अत आपकी
ये वजूदे लावजूदी में सदाए नेसती
ख़ूब है दूई मिटाने की तरीक़त आपकी
आप हैं अहले मरातिब में अज़ीमुल मर्तबत
सैकड़ों वलियों से आला है विलायत आपकी
आपको समझा न जिसने क्या वो समझे राज़े हक़
हाँ वो समझे जिसको हासिल हो अक़ीदत आपकी
लेके जाते हैं मुरादें आपके दरबार से
ग़मज़दों पर ख़ास होती है इनायत आपकी
क्या शरीअत क्या तरीक़त और क्या है मारिफत
उसने समझी मिल गई जिसको हिदायत आपकी
हो गई हज़रत तसद्दुक़ पर तसद्दुक़ मारिफ़त
वह ख़िलाफ़त दे गई शाने नियाबत आपकी
आरिफ़े अल्लाह भी आखिर बक़ा भी आप हैं
मनक़बत में क्या बयाँ हो शाने अज़्मत आपकी
इक नज़र पड़ती करम की तो सँवर जाती हयात
काश कौसर पर कभी होती इनायत आपकी

(कौसर सीवानी मरहूम)

मनकबत ब जबान हिन्दी

अन्नदाता तुम ही हो मेरे, तुम ही पालनहार, कृपा करो सरकार रंगीले
कौन हरे दुःख दर्द को मेरे, बैरी है संसार, कृपा करो सरकार रंगीले
पाप की गठरी सर पे लादे दर-दर ठोकर खाऊँ
किसने सुनी है बिनती मेरी सबने दी धुतकार कृपा करो सरकार रंगीले
आस की नय्या भवसागर में डगमग डगमग डोले
आके भँवर में कौन बचाए खाती है हिचकोले
दुखियों की नइया का प्रभु! तुम हो खेवन हार, कृपा करो सरकार रंगीले
ज्ञान की ज्योति तुम हो स्वामी, मैं मूरख अज्ञानी
माया जाल बिछा है पग-पग, राह भी है अनजानी
अंधियारे में कैसे चलूँ, मैं बेबस और लाचार, कृपा करो सरकार रंगीले
प्रीत की अगनी आग लगाकर निरमोही तड़पाए
बिन दर्शन के व्याकुल मनवा चैन कहीं न पाए
तुम से मिलन की आस का सपना कब हो साकार, कृपा करो सरकार रंगीले
तुम सुख सागर के स्वामी हो, मैं हूँ दुःख की मूरत
बैठ बिनारे साँझ सकारे देखूँ तुमरी सूरत
त्याग दी मैंने झूठ की गठरी, छोड़ दिया घरबार, कृपा करो सरकार रंगीले
तपती रेत है मेरा जीवन, एक-एक बूँद को तरसूँ
मैं तर जाऊँ तुमरी दया जो अमृत बन के बरसे
इतना तो 'फारूक' पे अपने कर दो उपकार, कृपा करो सरकार रंगीले

सुब्ह रंगीला शाम रंगीला
दिल ने पुकारा नाम रंगीला
कोई कहे अन्नदाता तुझको
कोई कहे घनश्याम रंगीला

मन-मंदिर मे गूंज रहा है
कृष्ण रंगीला राम रंगीला
तेरे चरण की धूल जहाँ है
मेरा वहीं है धाम रंगीला
प्यासी नज़र को तेरी नज़र का
काश मिले इक जाम रंगीला
ग़ैर हो या अपना हो कोई
आए न किसके काम रंगीला
तेरे क़दम का नक़्श जहाँ है
अर्श का है वह बाम रंगीला
ज़िक्र तेरा फ़ारूक़ जो छेड़े
दिल को मिले आराम रंगीला

(फ़ारूक़ सीवानी)

मनक़बत ब जबान भोजपूरी

हम तोहरी चरनवा के धूल बाबा अमजद
विनती करलीं हमार कबूल बाबा अमजद

कौनो दिन कौनो रतिया ना बिसरे सूरतिया
हमरी अंखिया में खिल जाला फूल बाबा अमजद

एगो तोहरी हस्तिया से पार होई नइया
बाकी सब बाटे इहवाँ फजूल बाबा अमजद

भेद अहमद के खोल के बतौनी वली जी
दीने अहमद के बा इहे मूल बाबा अमजद

तोहरी रहिया में जे केहू सरपट दौड़ी
ओकरी पगवा में चूभी ना शूल बाबा अमजद

दर के मुशताक़ बानी लाज रखलीं वली जी
अपनी भक्ति में कर लीं कबूल बाबा अमजद

विनति करूँ सरकार रंगीले
करीहो ना इन्कार रंगीले

रीतू बसंत में अइहो अंगनवा
रिम झिम परत फूहार रंगीले

तोहरी बिरह में निसदिन तड़पूँ
जगत करे फटकार रंगीले

कोई ना तप जोग करूँ मैं
तूही मोरे आधार रंगीले

भव-सागर से पार लगइहो
नइया फंसी मंझधार रंगीले

तोहरी दर का हूँ मैं मंगता
दूजा ना दरकार रंगीले

धाम पे तोरे 'मुश्ताक़' है आया
कर दीहो उपकार रंगीले

(मुश्ताक़ अहमद मुश्ताक़)

मनक़बत

क्योंकर हो तुम्हारा वस्फ़ बयाँ या शाहे असद या जाने जहाँ
है लै-स-क मिस-ले-ही तुम से अयाँ या शाहे असद या जाने जहाँ
है शान हू-व-फ़ीश्शान शहा हैं गब्र-वो-मुसलमाँ तुम पे फिदा
तुम ही हो रंगीला क़ुतबे ज़माँ या शाहे असद या जाने जहाँ
हाँ तुम ही हो बहरे बे पायाँ अमवाज तुम्हारे कौन-ओ-मकाँ
हर ज़र्रा में तुम ही नेहाँ व अयाँ या शाहे असद या जाने जहाँ
हो ज़ीस्त तुम्हीं और ख़ूब तुम्हीं हो तालिब-ओ-मतलूब तुम्हीं
तुम बाद-ए-सबा और बहर-ए-रवाँ या शाहे असद या जाने जहाँ
महबूब मुहिब में फ़र्क़ नहीं है जिस्म से साया जुदा भी कहीं
बेराग असद है विर्द-ए-जुबाँ या शाहे असद या जाने जहाँ

(शाह अख़्तर हुसैन बेराग चिश्ती साबरी अमजदी)

मनक़बत

तसद्दुक़ बनामे तसद्दुक़ अली
वो राहे हक़ीक़त के कामिल वली
तवक्कुल के पैकर तसद्दुक़ अली
थे वाकिफ़ ब राज़े ख़फ़ी-ओ-जली
वो इरशादे आज़म दमे गुफ़्तगू
के फैली है खुशबू बहर कू-ब-कू
तसव्वुफ़ के माहिर वो रौशन ज़मीर
वो सुन्नत के पैरो अमल के कबीर

यह रुतबा मिला था ब फ़ज़्ले ख़ुदा
ये सच है के था रंग सबसे जुदा
मनव्वर है सीवान की हर गली
ब-फ़ैजे शहंशाह अमजद अली
ये दरबारे अमजद सलामत रहे
मसर्रत के होते रहे चहचहे
चिरागे़ मुहब्बत बहर सू जले
दुआओं की भिक्षा हमें भी मिले
दुआरी पे तेरी खड़ा है ख़िज़्र
इनायत हो हज़रत करम की नज़र

———

शहंशाहे तसव्वुफ़ आप हैं सालारे मंज़िल हैं
दिल-वो-जाँ से तसद्दुक़ हैं, निसारे पीरे कामिल हैं
रमूज़े इश्क़ से वाकिफ़ शनासाए हकाइक़ भी
क़लम से आशकारा हैं मज़ामीने दक़ाइक़ भी
किताबे सिर्रे हस्ती इस तरह से आपने लिखी
हुई तशरीहे कामिल बिल-यकीं राज़े हक़ीक़त की
अमीने राज़े बातिन हामिले कश्फ़-वो-करामत भी
अमीरे गंजे मानी साहिबे फन्ने इबारत भी
कहूँ क्या मैं? अयाँ है आप पर असरारे रूहानी
लिखूँ क्या मैं नेहाँ है आप में अनवारे यज़दानी
(क़य्यूम ख़िज़्र)

———

मनक़बत

चिरागे़ फ़ज़्ले रब्बानी तसद्दुक़ शाह सीवानी
जमाले नूरे इरफ़ानी तसद्दुक़ शाह सीवानी
अताए ग़ौसे समदानी तसद्दुक़ शाह सीवानी
मुईनुद्दीन के जानी तसद्दुक़ शाह सीवानी
सफीने अहले दिल के हैं रवाँ मौजे बला में भी
नहीं है ख़ौफ़े तुग़यानी तसद्दुक़ शाह सीवानी
वो जो मस्ती में लहराए दिल-वो-दीदह पे छा जाए
सरापा अक्से नूरानी तसद्दुक़ शाह सीवानी
रहे मस्ते अलस्त हर दम तेरा ये अमजदी शाहा
पिला दे जामे इरफ़ानी तसद्दुक़ शाह सीवानी

———

वारिसे ख्वाजगाँ हैं शाहे असद
नाज़िशे चिश्तियाँ है शाहे असद
किब्लए आशिकां हैं शाहे असद
काबए आरिफाँ है शाहे असद
मर्तबा उनका फ़नाफ़िल्लाह
मंज़िले लामकाँ हैं शाहे असद
चश्मे हैरत से क्यों न लोग पढ़ें
इक अजब दास्ताँ हैं शाहे असद
उनका रुतबा है जहाँ में अरफ़ा
हादीए हादियाँ हैं शाहे असद
बे पनाहों पे, बे सहारों पर
किस क़दर मेहरबाँ हैं शाहे असद
इल्तिफ़ात उनकी चाह में गुम हो
इश्क़ के तर्जुमाँ है शाहे असद
(शाह इल्तिफ़ात अमजदी)

———

मनक़बत

रंग अनोखा शाह असद का
घर-घर चर्चा शाह असद का
दुनिया के हर अहले नज़र को
चेहरा भाया शाह असद का
देख के दिल मसरूर है मेरा
दिलकश मुखड़ा शाह असद का
प्यास बुझा देता है सबकी
बहता दरिया शाह असद का
रिज़वाँ भी देखे तो कह दे
खुल्द है रौज़ा शाह असद का
जान है कुर्बां इनकी अदा पर
दिल दीवाना शाह असद का
बनना है जो मस्त क़लंदर
पी लो मीना शाह असद का
इक मुद्दत से फैला हुआ है
दिल में उजाला शाह असद का
ग़ैर का इसपर दावा कैसा
दिल पे क़ब्ज़ा शाह असद का
हर दम है मौजूद के सर पर
फ़ैज़ का साया शाह असद का

हक़ हक़ हक़

शजरा शरीफ़

सिलसिला चिश्तिया साबरिया अमजदिया का शजरा (गद्य रूप में)

1. हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम।
2. हज़रत अली मुर्तज़ा शेरे ख़ुदा रज़ियल्लाहु अन्हु।
3. हज़रत ख्वाजा हसन बसरी रहमतुल्लाह अलैहि।
4. हज़रत ख्वाजा अब्दुल वाहिद बिन ज़ैद रहमतुल्लाह अलैहि।
5. हज़रत ख्वाजा फ़ुज़ैल बिन अयाज़ रहमतुल्लाह अलैहि।
6. हज़रत ख्वाजा इब्राहीम बिन अदहम बल्ख़ी रहमतुल्लाह अलैहि।
7. हज़रत ख्वाजा हुजैफ़ा मरअशी रहमतुल्लाह अलैहि।
8. हज़रत ख्वाजा अबू हुबैरा बसरी रहमतुल्लाह अलैहि।
9. हज़रत ख्वाजा मुमशाद उलू दिन्नौरी रहमतुल्लाह अलैहि।
10. हज़रत ख्वाजा अबू इसहाक़ शामी चिश्ती रहमतुल्लाह अलैहि।
11. हज़रत ख्वाजा अबी अहमद अब्दाल चिश्ती रहमतुल्लाह अलैहि।
12. हज़रत ख्वाजा अबू मोहम्मद अब्दाल चिश्ती रहमतुल्लाह अलैहि।
13. हज़रत ख्वाजा नासेरूद्दीन अबू यूसुफ़ चिश्ती रहमतुल्लाह अलैहि।
14. हज़रत ख्वाजा मौदूद चिश्ती रहमतुल्लाह अलैहि।
15. हज़रत ख्वाजा हाजी शरीफ़ ज़िन्दनी रहमतुल्लाह अलैहि।
16. हज़रत ख्वाजा उस्मान हारूनी रहमतुल्लाह अलैहि।
17. हज़रत ख्वाजा मोईनुद्दीन हसन चिश्ती अजमेरी रहमतुल्लाह अलैहि।
18. हज़रत ख्वाजा कुतबुद्दीन बख्तियार काकी रहमतुल्लाह अलैहि।
19. हज़रत ख्वाजा बाबा फरीदुद्दीन शकरगंज रहमतुल्लाह अलैहि।
20. हज़रत ख्वाजा मख्दूम अलाउद्दीन अली अहमद साबिर कलयरी रह0अ0

21.हज़रत शैख़ हाफ़िज़ शमसुद्दीन तुर्क पानीपती रहमतुल्लाह अलैहि।

22.हज़रत शैख़ जलालुद्दीन कबीरूल औलिया पानीपती रहमतुल्लाह अलैहि।

23.हजरत शैख़ मख्दूम अहमद अब्दुलहक़ रूदौलवी रहमतुल्लाह अलैहि।

24.हज़रत शैख़ आरिफ़ अहमद रूदौलवी रहमतुल्लाह अलैहि।

25.हज़रत शैख़ मुहम्मद अहमदी रूदौलवी रहमतुल्लाह अलैहि।

26.हज़रत मौलाना शैख़ अब्दुल क़ुद्दूस गंगोही रहमतुल्लाह अलैहि।

27.हज़रत मौलाना शैख़ जलालुद्दीन थानेसरी (कुरूक्षेत्र, हरियाणा) रहमतुल्लाह अलैहि।

28.हज़रत मौलाना शैख़ निज़ामुद्दीन बल्ख़ी रहमतुल्लाह अलैहि।

29.हज़रत शैख अबू सईद हनफ़ी गंगोही रहमतुल्लाह अलैहि।

30.हज़रत शैख मुहम्मद सादिक़ हनफ़ी गंगोही रहमतुल्लाह अलैहि।

31.हज़रत शैख बन्दगी दाऊद गंगोही रहमतुल्लाह अलैहि।

32.हज़रत शैख़ अबुल मुआली अम्बेठवी (सहारनपुर) रहमतुल्लाह अलैहि।

33.हज़रत सैयद मुहम्मद सईद मीरान भीख तिरमिज़ी सीवानवी ठसकवी कोहारमवी (पटियाला) रहमतुल्लाह अलैहि।

34.हज़रत शाह इनायतुल्लाह बहलोलपुरी रहमतुल्लाह अलैहि।
(विसाल: 5 रमज़ान 1195 हिजरी/ 2 सितम्बर 1878 ई0; मज़ार: बहलोलपुर, जिला लुधियाना, पूर्वी पंजाब, भारत)

35.हज़रत शाह अब्दुल करीम आखून फ़कीर रामपुरी रहमतुल्लाह अलैहि।
(विसाल: 2 शाबान 1206 हिजरी/ 26 मार्च 1791 ई0; मज़ार: हलक़ा वाली मस्जिद, जिला रामपुर, यू0पी0, भारत)

36.हज़रत शाह अली मुहम्मद पीर लक़ब मियाँ साहब पीलीभीती सुम्मा पिपलवी रहमतुल्लाह अलैहि।
(विसाल: 11 जुमादिल अव्वल 1250 हिजरी/ 15 सितम्बर 1834 ई0; मज़ार: पिपली शरीफ़, तहसील सवार, जिला रामपुर, यू0पी0, भारत)

37.हज़रत अली मुहम्मद मुरीद लक़ब अली मस्त पीलीभीती सुम्मा संभली रहमतुल्लाह अलैहि।
(विसाल: 9 ज़िलहिज़्ज़ा 1265 हिजरी/ 25 अक्टूबर 1849 ई0; मज़ार: संभल, यू0पी0, भारत)

38.हज़रत शाह क़ारी नूरूलहक़ रामपुरी रहमतुल्लाह अलैहि।
(विसाल: रजब 1270 हिजरी तदनूसार मार्च/अप्रैल 1854 ई0; मज़ार: मौजा समोई, जिला फ़र्रूख़ाबाद, भारत)

39.हज़रत मख्दूम शाह साबिर अली बनारसी रहमतुल्लाह अलैहि।

40.हज़रत हाजीउर हरमैन शैख मुहम्मद कुतबुद्दीन नंदानवी सुम्मा बनारसी रह0अ0

41.हज़रत सैयद शाह अमजद अली सुल्तान रंगीला आखिरूल बक़ा मैनपुरवी सुम्मा सीवानी क़द्दससिर्रहुल अज़ीज़।

42.हज़रत मौलाना सैयद शाह तसद्दुक़ अली सुल्तान असद शेरशाह तेजरफ़्तार इमामुल औलिया चिश्ती साबरी अमजदी मेरठी सुम्मा सीवानी क़द्दससिर्रहुल अज़ीज़ (सुप्रसिद्ध पर वाले शाह साहब)

43.हजरत सैयद शाह हकीम ख़ुर्शीद अली चिश्ती साबरी अमजदी सज्जादानशीन क़द्दससिर्रहुल अजीज़।

44.हज़रत सैयद शाह सग़ीर अहमद अमजदी चिश्ती साबरी सज्जादा नशीन मद्दा ज़िल्लुहुल आली।

45.नाचीज़ मिस्कीन हक़ीर सैयद तनवीर अहमद ''मौजूद'' अफ़ी अन्हु।

(ख़ाकनशीन ख़ानक़ाह अमजदिया, सीवान, बिहार, भारत)

——

हक़ हक़ हक़
शजरा शरीफ़
चिश्तिया साबरिया अमजदिया (उर्दू भाषा के पद्य रूप में)

1. एहदिनी रब्बी मुहम्मद[1] मुस्तफ़ा के वास्ते।
सद-र-ना अशरह इमामे अम्बिया के वास्ते।।

2. हाल इल्लल्लाह का हो जाए तारी मुझ पे भी।
अहमदे बे-मीम महबूबे ख़ुदा के वास्ते।।

3. पैरवी में पेशवाओं के क़दम साबित रहे।
बू तुराब[2]-ए-बादशाहे औलिया के वास्ते।।

4. हो मनव्वर चश्मे दिल नूरे जमाले पाक से।
उस हसन[3] बसरी इमामे औलिया के वास्ते।।

5. कर हबाब आसा खुदी से पाक मुझको ऐ खुदा।
अब्दे वाहिद[4] कातए हर मा सिवा के वास्ते।।

6. कर क़बूल इस बन्दए आजिज़ को अपने फ़ज़्ल से।।
या खुदा हज़रत फ़ुज़ैल[5]-ए-बा रज़ा के वास्ते।।

7. शाही-ए- मुल्के क़नाअत तू अता कर दे मुझे।
अपने उस महबूब इबराहीम[6] शाह के वास्ते।।

8. जामे सहबाए मुहब्बत से मुझे सरशार कर।
मुर्शिद-ए-बरहक़ हुज़ैफ़ा[7] बा सफ़ा के वास्ते।।

9. शौक़ तेरे दीद का है मुझ को मंज़ूरे नज़र।
आशिके सादिक़ हुबेरा[8] बा खुदा के वास्ते।।

10. शाद रख दिल को मेरे रंजो बलाए इश्क़ में।
ख्वाजा-ए-मुम्शाद[9] अल्वी बा रज़ा के वास्ते।।

11. अल-मदद या ख्वाजा-ए इस्हाक[10] मक़बूले खुदा।
कर रिहा मुझको ख़ुदी से अब खुदा के वास्ते।।

12. विर्द हो नामे मुहम्मद मुझ को वक़्ते नज़ा भी।
अहमद[11]-ए-अब्दाल आले मुस्तफ़ा के वास्ते।।

13. दुश्मनों के कीद से हिफ़्ज़ो अमाँ में रख मुझे।
बू मुहम्मद[12] आशिके ख़ैरूल-वरा के वास्ते।।

14. ज़ुल्म से इस नफ़्से सरकश के लबों पर जान है।
अल-मदद या नासेरूद्दीन[13] मुस्तफ़ा के वास्ते।।

15. इश्क की आतिश से बिरयाँ हो मेरा क़ल्ब-व-जिगर।
ख्वाजा-ए-मौदूद[14] पीरे रहनुमा के वास्ते।।

16. या इलाही हो तवाफे काबा-ए-बातिन नसीब।
ख्वाजा-ए-हाजी शरीफ़े[15] बा-ज़िया के वास्ते।।

17. ख़िल्अते हिल्म-व-हया से तू मुशर्रफ़ कर मुझे।
ख्वाजा-ए-उस्माँ[16] वलीए बा हया के वास्ते।।

18. लश्करे हिर्स-व-हवस ने सख्त घेरा है मुझे।
या मुईनुद्दीन[17] मदद कीजिए ख़ुदा के वास्ते।।

19. आरजूएँ इस दिले नाशाद की बर आएँ सब।
शाह कुतबुद्दीन[18] मक़बूले दुआ के वास्ते।।

20. शरबते दीदार मुझ दिल सोख़्ता को हो नसीब।
हज़रते गंजे शकर[19] के इत्तिक़ा के वास्ते।।

21. दौलते सब्र-व-तवक्कुल से ग़नी हो जाऊँ मैं।
उस अलाउद्दीन[20] बा सब-व-रज़ा के वास्ते।।

22. हाए किस का नाम आया है जबाँ पे इस घड़ी।
दिल मेरा सीना में मुज़्तर है लेक़ा के वास्ते।।

23. मतलए खुर्शीद-ए-इरफाँ हो दिले ग़मगीं मेरा।
शाह शमसुद्दीन[21] पीरे बा-ज़िया के वास्ते।।

24. मक्र से शैतान के महफ़ूज रख मुझको ख़ुदा।
उस जलालुद्दीन[22] पीरे अत्क़िया के वास्ते।।

25. दस्तगीरे बेकसाँ या शैख़ अहमद अब्देहक़[23]।
हल करो उक़्दा मेरा मुश्किल कुशा के वास्ते।।

26. है रूदौली जल्वागह उस मतलए अनवार का।
दीन-व-इमाँ सब निसार उस मेहलक़ा के वास्ते।।

27. जान-व-दिल मेरा तसद्दुक़ उसके नामे पाक पर।
जान क्या सद जाँ फ़िदा उस दिलबरा के वास्ते।।

28. नूरे इरफ़ाँ दिल के आईना में हो सूरत पज़ीर।
आरिफ[24] अहमद शैख बज़्मे अस्फ़िया के वास्ते।।

29. शामते आमाल से अज़ बस ज़लील-व-ख़्वार हूँ।
रहम कर या रब मुहम्मद[25] पेशवा के वास्ते।।

30. या इलाही खात्मा बिल-खैर हो जाए मेरा।
हज़रते कुद्दूस[26] पीरे रहनुमा के वास्ते।।

31. गन्जे वहदत का मुझे अब कर दे तू गंजीनावार।
उस जलालुद्दीन[27] थानेसर खुदा के वास्ते।।

32. अपने इम्काने करम से बख़्श दे मुझको खुदा।
उस निज़ामुद्दीन[28] पीरे बा-खुदा के वास्ते।।

33. या इलाही मुझको राहे रास्त पर कर मुस्तक़ीम।
उस सईदे[29] हादी महबूबे खुदा के वास्ते।।

34. या खुदा देना अज़ाबे क़ब्र से मुझको निजात।
हज़रते सादिक़[30] शहंशाहे खुदा के वास्ते।।

35. अपनी उल्फ़त में मुझे रखना ब-वक़्ते वापसी।
हज़रते दाऊद[31] शाहे दूसरा के वास्ते।।

36. या खुदा मेरे दिले नाशाद को तू शाद कर।
हज़रते शाहे मुआली[32] बे-रिया के वास्ते।।

37. या खुदा रखना तवक्कुल में मुझे साबित क़दम।
शाह भीका[33] बादशाहे अस्फ़िया के वास्ते।।

38. या इलाही हाल पर ग़ालिब रहूँ ता-वक़्त मर्ग।
हज़रते शाहे इनायत[34] बे-रिया के वास्ते।।

39. या इलाही बन्दए आसी पे रख चश्मे करम।
हज़रते अब्दुल करीमे[35] बा-सफ़ा के वास्ते।।

40. या इलाही क़ूवते ईमान ज़ोरे इश्क़ दे।
उस मियाँ साहब अली[36] शेरे खुदा के वास्ते।।

41. या इलाही बूए वहदत से मुझे सरमस्त कर।
उस अली[37] मस्ते मए क़ालू बला के वास्ते।।

42. या इलाही नूरे कुरआँ से मुझे पुरनूर कर।
शाह नूरूलहक़[38] इमामे अत्क़िया के वास्ते।।

43. या इलाही मुझको रख तू साबिर-व-शाकिर मुदाम।
हज़रते साबिर[39] अली सब्र-व-रज़ा के वास्ते।।

44. या इलाही दिल मेरा कर मशरिक़े खुर्शीद-ए-इश्क़।
शाह कुतबुद्दीन[40] कुतबे दूसरा के वास्ते।।

45. ऐ रंगीला जामा-ए-हस्ती को मेरे रंग दे।
शैख़ अमजद[41] सर गरोहे अस्फ़िया के वास्ते।।

46. इन बुज़ुर्गों का हर इक नक़्शे क़दम हो दिल पे नक़्श।
शेर शाहे[42] पाक बाज़े औलिया के वास्ते।।

47. चश्मे दिल पुर-नूर रख मेरी तू ऐ मेरे ख़ुदा।
शाह खुर्शीद[43]-ए-दरखशाँ बा-जिया के वास्ते।।

48. बारिशें हो मेरे दिल पर अमजदी अनवार की।
उस सग़ीर[44] अहमद सिराजे मुस्तफा के वास्ते।।

49. वास्ते पीराने बाला नज़्र कर मेरी क़बूल।
मग़्फ़िरत कर रहम कर शाने अता के वास्ते।।

50. आसी-ए-मौजूद[45] पर हो जाए चश्मे इल्तिफ़ात।
इक वसीला चाहिए रोज़े जज़ा के वास्ते।।

हक़ हक़ हक़

शजरा शरीफ़

चिश्तिया साबरिया अमजदिया (फ़ारसी भाषा के पद्य रूप में)

1. ऐ के ज़े-कुन कौन शुदी सर-ब-सर।
ऐ के तूई जौहर-ए-हर खुश्क-व-तर।।

2. ऐ के तूई अव्वल-व-आख़िर हमा।
ऐ के तूई बातिन-व-ज़ाहिर हमा।।

3. ऐ के तूई दर सिफत-व-ख़ैर व-शर।
ऐ के तूई नख़्ल व गुल व शाख़ व तर।।

4. ऐ के हमा हस्त ज़े तो गश्त हस्त।
ऐ के बला गुफ़्त-इ बाद-ए-अलस्त।।

5. ऐ के तूई अस्ल शह-ए-इंस व जाँ।
ऐ के तूई सौलत-ए-पैग़म्बराँ।।

6. ऐ के शुदी मज़हरे इम्कान-ए-ख़ल्क़।
ऐ के शुदी मसदरे एहसान-ए-ख़ल्क़।।

7. ऐ तू मुनज़्ज़ा ज़े ज़मान-व-मकाँ।
ऐ तू बईद अज़ खेरद-ए-इंस-व जाँ।।

8. ऐ सिफ़तत हम सिफत-व-ऐन ज़ात।
ऐ के शुदी ऐन शेवन-व-जेहात।।

9. ऐ के ब-फ़रमूदई इन्नी अना।
बाज़ ज़े वहदत शुदा कसरत नूमा।।

10. ऐ के तू बा-पर्दा ब-पर्दाख़्ती।
खुद अ-ल-मे मीम बर-अफ़राख़्ती।।

11. खुद शुदा अहमद तू गुजीदी-ए-ख़फ़ा।
दर पश-ए-पर्दा अहदी बरमला।।

12. दिलबर वो दिल्दार तूई ग़ैर कू।
यार दर-ए-अग़यार तूई ग़ैर कू।।

13. लौह-व-क़लम गश्ती वो आमिर शुदी।
रूह शुदी ख़ातिर-ए-हाज़िर शुदी।।

14. रफ़्ता ब-मेराजे क़बूल आमदी।
हम ज़े उरूजत ब नज़ूल आमदी।।

15. मजमा-ए-बहरैन ब-हक़ ज़ात-ए-तू।
ज़ाहिर अज़ीं नफी हम इस्बात-ए-तू।।

16. जलवा नुमाई तू दरीं कायनात।
जाँ के अयाँ गश्त-इ ब-अयान-ए-ज़ात।।

17. गर चे शुदी मस्त ज़े जाम-ए-ज़हूर।
हस्तीयत अल-आन कमा कान नूर।।

18. आँ शज़र असलश के बवद ज़ात-ए-तू।
फ़र-अ-शज़ इन्आम वो करामात-ए तू।।

19. रंग-ए-तू दर रंगे मुहम्मद[1] अयाँ।
ऐन अली[2] दाद ज़े-ऐनत निशाँ।।

20. गह-ब-हसन[3] जलवा फ़रेज़ा आमदी।
वाहिद[4] वो अब्द-ए-नुमा आमदी।।

21. गाह-ए-कुनी जलवा ब-रंग-ए-फ़ुज़ैल[5]।
गाह-ए-ब वस्लत तू कुनी रू-ए-मैल।।

22. गाह-ए-ब-राहीम[6] शवी बे ज़ेयाँ।
गाह-ए-ब हुजैफा[7] व हुबैरा[8] अयाँ।।

23. गाह-ए-नुज़ूल तू उलू[9] मी शवद।
गाह-ए-ऊरूज तू-ब-हू मी शवद।।

24. गाह-ए-ब-इस्हाक़[10] शुदी जलवागर।
गह ब अबी अहमद[11]-ए-आली गुहर।।

25. गह ब अबू[12] वस्ल मुहम्मद शुदी।
मन ब फिदायत चे मुमज्जद शुदी।।

26. गाह शवी नासिर[13]-व-नुसरत देही।
अहले वफ़ा रा तू चे राहत देही।।

27. गाह-ए-तू मौदूद[14] शुदी या वदूद।
गाह-ए-शहूदी तू गह-ए-बावजूद।।

28. गाह-ए-शुदी शान-ए-शरीफ[15]-ए-वली।
गाह-ए-ब उस्मानस्त[16] तोरा यक दिली।।

29. गाह-ए-पए दीन-ए-मुहम्मद मुईन[17]।
गाह-ए-शवी ग़ौस-ए-जहाँ कुत्ब-ए-दीं[18]।।

30. गह-ब-फरीदाई[19] यगाना शवी।
गंज-ए-शकर फ़र्दे-ए-ज़माना शवी।।

31. गाह-ए-ओला[20] गश्त-इ-तू साबिर शुदी।
शम्स[21] शुदा ज़ाहिर-व-बाहिर शुदी।।

32. गाह-ए-अयाँ गश्त-इ-रंगे जलाल[22]।
गाह-ए-तूई अब्दहक[23]-ए-बा कमाल।।

33. गह ब जहाँ अहमद-ए-आरिफ़[24] शुदी।
खुद सिफती-व-खुद हमा वासिफ शुदी।।

34. गाह-ए-मुहम्मद[25] तूई व अहमदी।
गाह-ए-तूई मुन्तहीयो मुब्तदी।।

35. गाह-ए-तूई कुद्दूस[26] शुदी या वली।
गाह-ए-ख़फी गश्तीयो गाह-ए-जली।।

36. गाह-ए-कुनी शक्ल-ए-जलाल[27] इन्तेज़ाम।
गाह-ए-तूई दीन-ए-मतीं रा नेज़ाम[28]।।

37. गाह-ए-कुनी जल्वा-ए-तू दर बू-सईद[29]।
गाह-ए-क़रीब अज़ हमा गाह-ए-बईद।।

38. गाह-ए-शुदा सादिक़[30] वो हम रास्त बाज़।
कर-द-ई खुद नाला-ए-पुर सोज-व-साज़।।

39. गाह-ए-क़बादारी-ए तू दाऊद[31] रंग।।
गाह ज़दी दस्त-ब-दफ़ गह-ब-चंग।।

40. गह-ब-मोआली[32] तू नुमाया शुदी।
गाह-ए-अयाँ सय्यद-ए-मीराँ[33] शुदी।।

41. गाह-ए-इनायत[34] तू शवी गह जलाल।
गाह ज़े-दो-राई ब-रंगे जमाल।।

42. गाह-ए-करीमी[35] चे अजब शान-ए-तुस्त।
गाह-ए-रहीमी ज़े बस एहसान-ए-तुस्त।।

43. गह-ब-सर यकजेहती या अली[36]।
मुत्तसिल-ए-जाते तू मुहम्मद शुदी।।

44. गाह अली[37] मस्त शुदी दर अयाँ।
हस्ती वो हस्ती ज़े निगाहम नेहाँ।।

45. गाह-ए-शुदी नूर[38] अयाँ व नव-नेहा।
गाह-ए-शुदी साबिर[39]-ए-आली निशाँ।।

46. कुतब[40]-ए-अली गश्ती-व-हम सरगरोह।
सूरत-ए-अमजद[41] अली बा शिकोह।।

47. हम तूई दर रंग-ए-तसद्दुक़[42] अली।
शान-ए-अली गश्त ज़े तू मुन्जली।।

48. रंग-ए-अली गश्ता तसद्दुक़ ब ज़ात।
बाज़ शुदी पाक ज़े जात-व-सेफात।।

49. हम तूई खुर्शीद[43] अली दर वजूद।
जात-ए-तू शुद दूर ज़े नाम-व-नमूद।।

50. शुद सग़ीर[44] अहमद अमीर-ए-आरफीं।
सय्यदुस्सादात व शैखुस्सालेकीं।।

51. दिलबर-व-बू-दस्त जमालत मोरा।
सैर बेकुन ज़े आब-ए-वसालत मोरा।।

52. कर्द ब-इश्क़ तू दिल खुद कबाब।
ऐ ज़े तू इज्ज़ते उम्मुल किताब।।

53. ख़ैर चूँ हुस्त तू अयाँ मी कुनद।
शर पे पायान-ए-सर खुद मी ज़ेनद।।

54. ख़ैर न ख्वाहम न शर इल्ला तोरा।
दूर बे-कुन अज़ हमा चून-व-चेरा।।

55. दरियम व हम क़तरा चे जोयम तोरा।
मौज-व-हुबाब अज़ ज़े बगोयम तोरा।।

56. खातिम-व-ज़र रास्त चे निस्बत बतू।
तुख्म-ए-शजर रास्त चे निस्बत बतू।।

57. आलम-ए-इम्काँ हमा अज़आन-ए-तू।
लै-स-कमिस्लहू बवद अज़ शान-ए-तू।।

58. ऐ तू मोअर्रा ज़े हमा रंग-ए-चूँ।
ज़ात-ए-तू बहतस्त-व-बरीं अज़ नमूँ।।

59. नेस्त ब खुद कुन तो मोरा जुल्जलाल।
गुम-ब-शोम वो दूर अजीं कील-व-क़ाल।।

60. गाह-ए-न्या बद कस-ए-अज़ मन निशाँ।
मन ब तूफानी-व-तू बा-मन अयाँ।।

61. विर्द कुनीं हम्द ख़ुदा रा 'ख़लील'।
ता-त-शवी अज़ फानी-ए जात-ए-जलील।।

नोटः- ऊपर दिए गए शजरा की रचना हज़रत बाबा ख़लील दास चतुर्वेदी चिश्ती साबरी अमजदी द्वारा की गई थी, जो हज़रत सैयद तसद्दुक़ अली असद परवाले शाह साहब के प्रसिद्ध खलीफा थे। इसके अतिरिक्त एक फ़ारसी मंज़ूम शज़रा हज़रत मौलवी मोहम्मद इस्हाक़ मोतीहारवी[रह० अ०] (शाह ख़ामोश) ने भी लिखी थी। एक उर्दू मंज़ूम शज़रा मौलाना शाह इतरत हुसैन[रह० अ०] ने भी तहरीर फरमाया था। इन दोनो हज़रात को हज़रत सैयद शाह तसद्दुक अली सुल्तान असद (पर वाले शाह साहब) से बैअत हासिल थी।

हक़ हक़ हक़

फारसी शजरा शरीफ (संक्षिप्त)

चिश्तिया साबरिया अमजदिया

ऐहदिनी बहरे मोहम्मद मुस्तफ़ा मौला अली
हम हसन हम अब्दे वाहिद हम फ़ुज़ैले वाहिदी

बहरे इब्राहीम अहमद हम हुजैफ़ा मरअशी
हम हुबैरा हम उलू मुमशाद इस्हाके वली

बहरे अहमद ज़ाहिदी अब्दाल यूसुफ चिश्तई
बहरे शह मौदूद, शह हाजी शरीफे ज़िन्दनी

बहरे उस्मान वो मोइनुद्दीन कुतबुद्दीं वली
हम फ़रीदुद्दीं अलाउद्दीन शमसुद्दीं जली

हम जलालुद्दीन अब्दुलहक़ व आरिफ़ अहमदी
हम मोहम्मद अहमदी कुद्दूस हम थानेसरी

हम नेज़ामुद्दीं सईदे हनफ़ी सादिक़ बन्दगी
हम मोआली शाह भीका शह इनायत बहलवी

हम करीम वो शह मोहम्मद पीर हम शाहे अली
बहरे नूरूलहक़ व साबिर शाह, कुतबुद्दीं सखी

सय्यदी अमजद अली शाहे तसद्दुक शेर शाह
बहरे खुर्शीद वो सग़ीरे अमजदी बर मा निगाह

नतीज-ए-फ़िक्रः- इल्तिफ़ातुल औलिया इल्तिफ़ात अमजदी
खानक़ाह अमजदिया, स्टेशन रोड, सीवान
मो0 9934497795

लेखक की अन्य पुस्तकें

(1) बहारे अमजदी
(उर्दू भाषा के पद्य रूप में सन् 2010 ई0 में प्रकाशित)
(2) बहारे औलिया
(उर्दू भाषा के पद्य रूप में प्रकाशनाधीन)
(3) तनवीरुल औलिया
(उर्दू भाषा के गद्य रूप में लेखनाधीन)

☆☆☆